पहेलियों से सीखते विद्यार्थी

धर्मपाल गंगवार

पुस्तकालय में विद्यार्थियों के साथ काम करते हुए उनसे कविता व कहानियों पर निरन्तर बातचीत होती रहती है। इससे विद्यार्थियों में पढ़ने की रुचि बनती है। इसके साथ ही, कुछ कथेतर विधाओं की किताबों पर भी विद्यार्थियों से गतिविधियाँ कराई जाती हैं जिनमें वे कबाड़ या रोज़मर्रा के काम में इस्तेमाल की जाने वाली साधारण वस्तुओं से बहुत-सी उपयोगी चीज़ें बनाना सीखते हैं। इस बार विचार आया कि विद्यार्थियों से पहेलियों पर बातचीत की जाए। पहेलियाँ बूझने व उन्हें संकलित करके लिखने में विद्यार्थियों के अनुमान लगाने जैसे भाषाई कौशलों का विकास होता है। वे ध्यान से सुनते हैं, चीज़ों और घटनाओं को नए व काल्पनिक सन्दर्भों में देख-सोचकर उत्तर देते हैं। इनसे उनकी समझ और तर्कशक्ति बढ़ती है, और वे भाषा के एक नए रूप से परिचित होते हैं। इस तरह पहेलियाँ बूझना विद्यार्थियों के लिए रोचक, आनन्द से भरपूर शैक्षिक गतिविधि बन जाती है। आमतौर पर, पहेलियाँ एक प्रश्न, वाक्यांश या कथन के रूप में होती हैं जिनमें एक शब्द का अर्थ छुपा होता है। लेकिन कविता पहेलियों की तो बात ही निराली है। इनमें विद्यार्थी कविता पढ़ते हैं और पहेलियाँ बुझाते भी हैं। इन उद्देश्यों को ध्यान में रखकर एकलव्य द्वारा प्रकाशित *बूझो-बूझो* किताब पर विद्यार्थियों के साथ काम करने की योजना बनाई। इस किताब के लेखक रामबचन सिंह 'आनन्द' हैं तथा चित्रांकन सुभाष व्याम ने किया है।

पुस्तकालय में विद्यार्थियों को गोल घेरे में बैठाकर *बूझो-बूझो* किताब पर बातचीत शुरू की गई। विद्यार्थियों से पूछा, "क्या आपके घरों में पहेलियाँ पूछी जाती हैं?" यह सुनकर विद्यार्थी चहक उठे। वे दनादन पहेलियाँ पूछने लगे। मैंने कहा, "रुको-रुको! देखो, मेरे पास पहेलियों की एक किताब है। इसमें कविताओं वाली मज़ेदार पहेलियाँ हैं।" मैंने विद्यार्थियों से चित्रों को ध्यान से देखने को कहा। प्रत्येक पन्ना पलट-पलटकर चित्र दिखाए। चित्रों को पहचानने में मदद की। उन्हें बताया कि इन चित्रों में ही पहेलियों का उत्तर छुपा है। एक कविता पढ़कर सुनाई। इसके बाद बूझने के अन्दाज़ से, माथे पर उँगली रख-रखकर मैंने कविता गाई, और विद्यार्थियों ने दोहराई। कविता पहेली इस तरह से थी :

बिन हल के हलवाहा
बूझो बूझो बूझो!
मगज लगाकर जूझो!
बिन हल के हलवाहा
खेत जोतता, आहा
कड़ी फोड़कर मिट्टी
ढीली करता गिट्टी
लगता अरे, सपोला
लेकिन विष से पोला
भूरा कोमल फ़ीता
मिट्टी खाकर जीता
दिल रखे हैं आठ
ऐसे उसके ठाठ
अण्डे से हो पैदा
ख़ुद है नर औ' मादा
छू, अँगुल तर हुआ!
कौन, कौन...?

अब विद्यार्थियों से कहा, "मगज (दिमाग़) लगाओ और बताओ क्या है?" विद्यार्थी सोचते रहे, मगर उत्तर तक नहीं पहुँचे। फिर कविता की एक-एक पंक्ति को समझने की कोशिश की गई। खेत जोतता है, मिट्टी खाता है, आदि। आठ दिल रखने की बात में विद्यार्थी चक्कर खा गए कि किसके 8 दिल होंगे, अन्त में एक और इशारा किया। इसका उत्तर कविता की अन्तिम पंक्ति से ऊपर वाली पंक्ति के आख़िरी शब्द में भी छुपा हुआ है। इसके उत्तर की तुक आख़िरी शब्द से मिलती है। एक बार फिर चित्रों

को पलटकर दिखाया। अब एक विद्यार्थी ने पहचान लिया। वह ज़ोर से उत्साहित होकर बोला, "केंचुआ!" मैंने कहा, "बिल्कुल सही उत्तर।" इसी तरह से किताब की सभी 22 पहेली कविताएँ पढ़ी गईं। धीरे-धीरे विद्यार्थियों ने पहेली बूझने का अपना-अपना तरीक़ा बनाया, और उत्तर बताते चले गए। विद्यार्थियों को ख़ूब मज़ा आया।

आगे विद्यार्थियों से पूछा, "यह किताब अच्छी लगी या कहानियों की किताबें अच्छी लगती हैं?" कई विद्यार्थी एक साथ बोले कि इसमें ज़्यादा मज़ा आ रहा है। कुछ विद्यार्थियों ने कहा कि उन्हें दोनों तरह की किताबें अच्छी लगती हैं। "इस किताब में क्या बात अच्छी लगी?" पूछने पर निज़ारिश ने बताया, "हमें यह बात अच्छी लगी कि इसमें पहेलियों के उत्तर पहेली में ही छिपे हैं। इन्हें कविता की तरह गा सकते हैं और मगज लगाकर सोचते हैं।" अब विद्यार्थियों से कहा गया कि कल वे सब अपने परिवार में कही या पूछी जाने वाली पहेलियों को लिखकर लाएँगे।

अगले दिन निर्धारित समय पर विद्यार्थी पुस्तकालय कक्ष में बैठ गए। ज़्यादातर विद्यार्थी घर से पहेलियाँ लिखकर लाए थे। विद्यार्थी गाँव में बोली जाने वाली सौ से भी ज़्यादा पहेलियाँ खोज लाए। गोल घेरे में बैठे विद्यार्थियों ने बारी-बारी से अपनी पहेलियाँ पूछीं। दूसरे विद्यार्थियों ने जवाब देने की कोशिश की। जब विद्यार्थी पहेली बूझ नहीं पाते तब कहते कि अता-पता बताओ, यानी हिंट दो। फिर सभी विद्यार्थी सोचते और जवाब देते। इस तरह से कई राउंड हुए। अन्त में कुछ दिलचस्प पहेलियाँ चुनी गईं जिन्हें विद्यार्थियों ने चार्ट पेपर पर लिखा और डिस्प्ले बोर्ड पर लगाया। जैसे– चार खड़े, चार पड़े, चारों के मुँह में, दो-दो अड़े (चारपाई); आर खूँटा, पार खूँटा, गऊ मरखना, दूध मीठा (सिंघाड़ा); ज़रा-सी डिबिया, डिब-डिब होए, निकल कबूतर, खिल-खिल होए (कपास); आदि। बाद में दीपिका बोली, "कल भी यहीं पर बैठना, क्लास में अच्छा नहीं लगता है।" सोहेल ने कहा, "दो दिन ख़ूब मज़ा आया। सर, ऐसी ही किताबें पढ़ाया करो!"

पहेलियों की इस किताब पर काम के दौरान हमने देखा कि विद्यार्थी अपने घर से ढेर सारी पहेलियाँ इकट्ठी करके लाए, और उन पर बातचीत भी हुई। इससे उन्हें पहेलियों के रूप में अपने लोक साहित्य में झाँकने व उसकी समृद्ध परम्परा से रू-ब-रू होने का मौक़ा भी मिला।

धर्मपाल गंगवार, प्रधानाध्यापक, राजकीय प्राथमिक विद्यालय हल्दीपचपेड़ा, खटीमा, ऊधमसिंह नगर, उत्तराखण्ड

परीक्षाएँ भी मज़ेदार हो सकती हैं!

वैशाली गेदम

मैंने ब्लैकबोर्ड पर 'परीक्षा' शब्द लिखा, और विद्यार्थियों से पूछा, "हमें किस विषय पर परीक्षा लेनी चाहिए?"

वे सोचने लगे। मैंने कहा, "चलो, वर्गीकरण पर परीक्षा लेते हैं।" मैंने पहले से ही इस विषय को तय कर लिया था।

"हाँ, टीचर!" वे काफ़ी उत्साहित थे। पहली से पाँचवीं कक्षा तक के सभी विद्यार्थी 'वर्गीकरण' शब्द जानते थे, और उनमें से कई इस अवधारणा को समझते थे। ब्लैकबोर्ड पर लिखा : कार्य–वर्गीकरण करें।

उसके नीचे जानवरों के नामों की सूची लिख दी। इसमें पालतू और जंगली जानवरों के नाम शामिल थे।

विद्यार्थियों के दो समूह बनाए, और सुनिश्चित किया कि प्रत्येक समूह में कक्षा 1 से 5 के विद्यार्थी हों। प्रत्येक समूह एक गोल घेरे में बैठा। ब्लैकबोर्ड के दूसरी तरफ़ नियम लिखे :

- कार्य एक साथ किया जाना चाहिए।
- समूहों को आपस में चर्चा करनी चाहिए।
- दोनों समूहों को पास, यानी उत्तीर्ण होना चाहिए।
- काम साफ़ और सुन्दर होना चाहिए।

इसके अलावा उन्हें सवाल या काम के बारे में कुछ नहीं बताया।। मैंने सिर्फ़ नियमों को ज़ोर से पढ़ा ताकि विद्यार्थी उनका महत्त्व

समझ सकें क्योंकि वे पास होने के मानदण्ड थे, और उनके लिए उन्हें स्पष्ट रूप से जानना ज़रूरी था। जो पढ़ सकते थे, उन्होंने बोर्ड से सवाल पढ़ा। कुछ विद्यार्थी स्पष्टीकरण के लिए मेरे पास आए। मैंने उनसे कहा, "किसी को भी मुझसे बात करने की अनुमति नहीं है। मुझसे कुछ मत पूछो। एक दूसरे से पूछो। आपस में चर्चा करो।"

फिर भी श्रेया, लिमरा, साक्षी और अर्जुन अपने समूहों के बजाय मुझसे बात करने की कोशिश करते रहे।

"टीचर, हमें छह समूह बनाने हैं, है न?" साक्षी ने कहा।

ब्लैकबोर्ड पर तेरह जानवरों के नाम देखकर श्रेया ने कहा, "हमें तेरह समूह बनाने हैं।"

लिमरा ने कहा, "हमें छह समूह बनाने हैं।"

मैंने कहा, "अगर तुम मुझसे बात करोगे तो फ़ेल हो जाओगे। लेकिन एक दूसरे से बात करोगे तो पास हो जाओगे।"

यह सुनकर उन्होंने मेरे पास आना बन्द कर दिया। वे अपने साथियों से बातें करने लगे।

यह देखकर बहुत ख़ुशी हुई। वे तीन महीने पहले ही प्रत्यक्ष अनुभव और प्रदर्शन विधि के माध्यम से वर्गीकरण की अवधारणा सीख चुके थे। यह अवधारणा सिखाते समय मैंने विद्यार्थियों से बस इतना कहा, "बाहर जाओ, और कुछ पत्ते, फूल, पत्थर व टहनियाँ ले आओ।" जब वे ये चीज़ें लेकर आए तो उन्हें अलग-अलग करने को कहा, और इस तरह वर्गीकरण सीखने की शुरुआत हुई। फिर उन्होंने ख़ुद ही वर्गीकरण के लिए अन्य विषय सुझाए। उन्होंने अपने सहपाठियों के बालों और कपड़ों के आधार पर वर्गीकरण किया। जब वे आपस में चर्चा करने लगे तो पहली और दूसरी कक्षा के विद्यार्थी भी वर्गीकरण शब्द से जुड़ पाए। दस-बारह दिनों में उन्होंने जो कुछ सीखा था, वह सब उन्हें याद आ गया। धीरे-धीरे उनकी चर्चाएँ स्पष्ट होती गईं।

वे गोंडी भाषा में बात कर रहे थे, और मुझे शिकारी, पत्ती खाने वाला जैसे शब्द सुनाई देने लगे। एहसास हुआ कि वे जानवरों को शाकाहारी और माँसाहारी के रूप में वर्गीकृत कर रहे थे। इससे मैं बहुत प्रभावित हुई। मैंने कल्पना की थी कि विद्यार्थी जानवरों का वर्गीकरण पालतू और जंगली के रूप में करेंगे, लेकिन वे तो और ज़्यादा गहराई से सोच रहे थे। यह तो अच्छा हुआ कि ब्लैकबोर्ड पर 'पालतू' और 'जंगली' वाली तालिका नहीं बनाई। अगर ऐसा किया होता तो उनका काम बहुत आसान हो जाता। उन्हें बिल्कुल भी सोचना नहीं पड़ता। लेकिन जब वे स्वयं सोचते हैं तभी सच्चा अधिगम / सीखना होता है।

उन्हें येली (चूहा) शब्द का ज़िक्र करते सुना। मैं उलझन में पड़ गई क्योंकि जानवरों की सूची में चूहा शामिल नहीं किया था। उन्हें यह शब्द कहाँ से मिला? फिर एहसास हुआ कि वे इस बात पर चर्चा कर रहे थे कि बिल्ली को कहाँ रखा जाए। इस वजह से चूहा उनकी बातचीत में आ गया। वाक़ई, यह चर्चा दिलचस्प थी!

बनाए गए नियमों में से एक नियम था : दोनों समूहों को पास होना चाहिए। मैंने उनसे कहा था, "यदि एक समूह असफल होता है तो दूसरा भी असफल हो जाएगा।"

इसलिए विद्यार्थियों ने मुझसे पूछा, "तो क्या हमें एक दूसरे की मदद करनी चाहिए?"

मैंने कहा, "यह आपको तय करना है।"

देखा कि उन्होंने एक दूसरे की मदद करनी शुरू कर दी थी।

जल्द ही, टेबल / तालिका और चार्ट जैसे शब्द सुनाई दिए। बड़े विद्यार्थियों ने काम शुरू किया, और छोटों को भी इसमें शामिल किया। उन्होंने अपनी नोटबुक और पेन निकाले। उनके निर्देशों का पालन करते हुए छोटे विद्यार्थियों ने भी अपनी-अपनी नोटबुक और पेन निकाले। उनके पास सिर्फ़ दो रूलर थे। मैंने अपने पास से सात-आठ रूलर निकालकर समूहों में बाँट दिए।

लिमरा ने दूसरे समूह को निर्देश दिया, "इसे 9 सेमी लम्बा बनाओ।"

श्रेया ने कहा, "अरे नहीं, हमने इसे 11 सेमी लम्बा बनाया है।"

तब लिमरा ने अपने समूह से कहा, "इसे 2 सेमी लम्बा करो।"

ज़ाहिर है, लिमरा के समूह ने तय किया था कि तालिका की लम्बाई 9 सेमी होगी, और दूसरे समूह को इसकी जानकारी दी। लेकिन दूसरे समूह ने पहले ही 11 सेमी लम्बी लाइन खींच ली थी, इसलिए लिमरा के समूह ने अपनी तालिका की लम्बाई 2 सेमी बढ़ा दी। विद्यार्थियों ने चार्ट की तुलना में तालिका शब्द पसन्द किया। बड़ों ने छोटे विद्यार्थियों की नोटबुक में भी तालिकाएँ बनाईं। मैं इनमें से कुछ के वीडियो बना रही थी। बड़े विद्यार्थियों ने अपना काम पूरा कर लिया, और पहली व दूसरी कक्षा के विद्यार्थियों की मदद करने लगे, ख़ासकर उनकी जो पीछे रह गए थे।

परीक्षा सुबह 11:00 बजे शुरू हुई थी। अपराह्न 1:30 बजे लंच ब्रेक था। थोड़ी देर खेलने के बाद, विद्यार्थी 2:45 बजे कक्षा में लौट आए, और 3:45 बजे तक वर्गीकरण परीक्षा पूरी हो गई। मन में उनके लिए ढेर सारा प्यार और प्रशंसा भरी हुई थी। वे हर नियम में पास हो गए थे। जब मैंने कहा, "बहुत बढ़िया!", तो उन्होंने एक लय में ताली बजाई और बोले, "एक, दो, तीन—बहुत बढ़िया!" विद्यार्थियों ने एक अवधारणा पर साढ़े तीन घण्टे का समय लगाया था, और इतनी लम्बी परीक्षा के बाद भी ख़ुशी से भरे हुए थे। हालाँकि परीक्षा का विषय वर्गीकरण था, लेकिन वास्तव में, यह एकीकरण की परीक्षा थी। और इसमें विद्यार्थी शानदार अंकों के साथ उत्तीर्ण हुए।

वैशाली गेदम, प्राथमिक शिक्षिका, ज़ेडपी प्राथमिक विद्यालय गोंडगुडा (ढोंदरजुनी), जीवती तालुका, चन्द्रपुर, महाराष्ट्र

अँग्रेज़ी से नलिनी रावल द्वारा अनुवादित।

विद्यार्थियों के लिए बनाई एक बिग बुक

खांगमबम निशा देवी

मैं मणिपुर के थौबल ज़िले के एक विद्यालय में कक्षा 2 को अँग्रेज़ी पढ़ाती हूँ। कोशिश यही रहती है कि विद्यार्थियों के सीखने के अनुभवों को और ज़्यादा मज़ेदार बनाऊँ। इसके लिए नए-नए तरीक़े खोजती रहती हूँ।

पाठ्यपुस्तक के पाठों को 'मीतेइलॉन' (हमारी स्थानीय भाषा) में समझाती हूँ, उनका अनुवाद करती हूँ, और प्रयास रहता है कि भाषा सिखाने के लिए बढ़िया-से-बढ़िया विधियाँ अपनाऊँ। इन विधियों में विद्यार्थियों के सीखने के स्तर के अनुरूप विधियों का होना भी शामिल होता है। बावजूद इसके, विद्यार्थियों को अभी भी पाठों को समझने में दिक़्क़त होती है, या वे रुचि नहीं दिखाते। अँग्रेज़ी उनके लिए परिचित भाषा नहीं है। उन्हें कुछ शब्दों को समझने में मुश्किल होती है। इसलिए सोचा कि कुछ नया और ऐसा करूँ जिससे विद्यार्थियों को पाठ समझने में आसानी हो।

मैंने एक 'बिग बुक' बनाने का फ़ैसला किया। मेरा अनुभव था कि विद्यार्थियों को बिग बुक बहुत अच्छी लगती है बिग बुक बनाने के लिए 'मदर नेचर' पाठ को चुना। इसके कवर पृष्ठ पर सूर्य, चन्द्रमा, पेड़ जैसे प्रकृति से सम्बन्धित कई चित्र बनाए। शीर्षक को बोल्ड और बड़े अक्षरों में लिखा। पुस्तक में कुल चार पृष्ठ थे। मैंने जानबूझकर पृष्ठों की संख्या कम रखी थी। चूँकि मेरे सभी विद्यार्थी पढ़ने के शुरुआती स्तर पर हैं, इसलिए कहानी को छोटा ही रखा। यह भी ध्यान रखा कि 'एमा', जिसका अर्थ मीतेइलॉन में माँ होता है, जैसे परिचित शब्द और वाक्यांश कहानी में बार-बार आएँ। ऐसे शब्द जो परिचित भी हों और उनका भावनात्मक जुड़ाव भी हो। इसके साथ कुछ और शब्द भी मैंने मीतेइलॉन में ही रखे। अधिकांश शब्द अब भी अँग्रेज़ी में थे। पुस्तक बनाने के बाद मैं इसे अपनी कक्षा में ले गई।

कक्षा में जाते ही विद्यार्थियों से कहा कि मेरे पास उनके लिए एक मज़ेदार चीज़ है। सभी विद्यार्थी देखने को आतुर थे। उन्हें अर्धगोले में बैठाया ताकि हर कोई पुस्तक को स्पष्ट रूप से देख सके। जैसे ही उन्होंने पुस्तक देखी, उनके चेहरे पर बड़ी-सी मुस्कान आ गई। सभी की आँखें उस पर जमी हुई थीं। मुझे उनकी मुस्कान देखकर बहुत अच्छा लगा। मैंने उनसे कुछ सवाल पूछे। जैसे–

- क्या आपको सरप्राइज़ पसन्द आया? यह कैसा दिखता है?
- आपको कवर पर क्या दिख रहा है?
- यह कहानी किस बारे में हो सकती है?

विद्यार्थियों ने अलग-अलग जवाब दिए क्योंकि ये सभी खुले सवाल थे।

फिर उचित हाव-भाव के साथ कहानी को ज़ोर से पढ़ना शुरू किया। बीच-बीच में जानने की कोशिश की कि क्या सभी विद्यार्थी कहानी समझ रहे हैं। जब मैंने 'एमा' जैसे शब्द पढ़े तो वे हँसने लगे, और 'एमा, एमा!' दोहराने लगे। उन्हें यह बात अच्छी लगी कि उनके कुछ परिचित शब्द इस पुस्तक में थे। कहानी सुनने में उनकी रुचि बनी रही। यहाँ तक कि जो विद्यार्थी कक्षा में शायद ही कभी बोलते थे, वे भी अपने विचार साझा कर रहे थे। बिग बुक के ज़रिए काम करने का लाभ यह हुआ कि सभी विद्यार्थियों की प्रतिभागिता बढ़ने लगी।

कहानी पढ़ने के बाद पुस्तक विद्यार्थियों को दी। उन्होंने चित्रों को ध्यान से देखा। कुछ विद्यार्थी कहानी में बार-बार आए शब्दों और वाक्यांशों को पहचान पा रहे थे; कुछ इसे ख़ुद पढ़ने की कोशिश भी कर रहे थे। यह देखकर अच्छा लगा कि विद्यार्थी पुस्तक को एक दूसरे के साथ साझा करते हुए देख रहे थे। एहसास हुआ कि भले ही बिग बुक बनाने में थोड़ा समय और प्रयास लगता है, लेकिन नतीजे सन्तोषजनक होते हैं। हालाँकि, पाठ्यपुस्तक के सभी पाठों के लिए ऐसी पुस्तकें बनाना सम्भव नहीं है। इसके लिए एक-दो पाठ चुने जा सकते हैं, और उन्हें विद्यार्थियों के लिए मज़ेदार बनाया जा सकता है।

मैंने यह पुस्तक अपनी कक्षा में रख दी है। अकसर देखती हूँ कि विद्यार्थी अपने ख़ाली समय में इसे पढ़ने की कोशिश करते हैं। वहाँ दूसरी पुस्तकें भी रखी हैं, लेकिन उन्हें यह सबसे ज़्यादा पसन्द है क्योंकि इसे मैंने उनके लिए बनाया है। विद्यार्थी इस पुस्तक के ज़रिए मुझसे जुड़ाव महसूस करते हैं। बिग बुक का प्रयोग अपनाई जाने वाली तमाम विधियों में से विद्यार्थियों के लिए काफ़ी लाभप्रद रहा।

खांगमबम निशा देवी, खोंगजोम स्टैंडर्ड इंग्लिश स्कूल, थौबल, मणिपुर

अँग्रेज़ी से नलिनी रावल द्वारा अनुवादित।

कक्षा में गणितीय बातचीत

संध्या सिंह

गणित पढ़ने और पढ़ाने में मेरी रुचि सदा ही रही है। मैं प्राथमिक कक्षाओं में गणित पढ़ाती हूँ। हर दिन एक नया गणितीय अनुभव लेकर आता है। शिक्षण के दौरान पाया कि गणित में विद्यार्थी मौखिक-व्यावहारिक सवाल और संख्याओं की जोड़-घटाने की संक्रियाएँ तो हल कर पाते हैं, पर शब्द समस्याओं, यानी इबारती सवालों पर अटक जाते हैं। इसका कारण उनकी गणित की तार्किक समझ कक्षा स्तर अनुसार विकसित नहीं होना होता है। वे गणित की समस्याओं के बारे में सवाल न पूछकर उन्हें मशीनी तरीक़े से हल करते हैं। सवाल-जवाब न होने से गणितीय बातचीत बन्द हो जाती है।

यह चुनौती रही है कि विद्यार्थियों को मैथ्स टॉक, यानी गणितीय बातचीत में कैसे शामिल किया जाए। किस तरह के सवाल पूछे जाएँ कि वे ख़ुद से सोचते हुए तार्किक निष्कर्ष पर पहुँचकर समझ बना पाएँ, और शाब्दिक समस्याओं को हल कर पाएँ। इसके लिए विषय के अनुसार कुछ सवालों का निर्माण किया और एक के बाद एक उन पर चर्चा शुरू की। जैसे– कक्षा 1 के विद्यार्थियों को एक शाब्दिक समस्या दी–

स्मृति ने अपनी कक्षा परियोजना के लिए बाहर से 5 पत्ते इकट्ठे किए, और उसके दोस्त जीवन ने 7 पत्ते इकट्ठे किए। दोनों ने कुल मिलाकर कितने पत्ते इकट्ठे किए?

विद्यार्थियों से उनके जवाब जानने के लिए चर्चा की–

शिक्षिका : गीतिका क्या तुम जवाब देना चाहोगी?

गीतिका : नहीं।

शिक्षिका : क्यों?

गीतिका : ग़लत हुआ तो?

शिक्षिका : कोई बात नहीं, हम मिलकर सही कर लेंगे।

गीतिका : मेरा जवाब 12 है।

शिक्षिका : तुमको जवाब कैसे मिला?

गीतिका : सवाल में कुल पत्तों को बताने के लिए कहा गया है, तो मैंने पहले 5 संख्या अपने दिमाग़ में रखी, और उसमें एक-एक करके 7 और मिला दिए तो उत्तर 12 बना।

शिक्षिका : शाबाश गीतिका! आपका जवाब और तरीक़ा बिल्कुल सही है। समर्थ आपका क्या जवाब है और कैसे मिला?

समर्थ : मेरा जवाब भी 12 ही है। मैंने पहले स्मृति द्वारा इकट्ठे किए गए 5 पत्ते बनाए, और फिर जीवन द्वारा लाए गए 7 पत्ते बनाए। इसके बाद सबको मिलाकर गिना और उत्तर मिल गया।

शिक्षिका : कोई और इस सवाल का जवाब बताना चाहेगा?

रशिका : जी मैडम! मेरा जवाब भी 12 ही है। पर कुल पत्ते बनाते समय मैंने 7 को 2 हिस्सों (5 + 2) में तोड़ा, फिर 5 + 5 पत्तों को जोड़ा, तथा उसमें 2 और पत्ते जमा किए।

शिक्षिका : शाबाश! आप सभी के उत्तर और तरीक़ा बिल्कुल सही है।

शुरुआत में विद्यार्थी जवाब देने में झिझके, और सही व ग़लत के पैमाने में ख़ुद को तोलने के डर से उन्होंने सोचने में झिझक महसूस की। पर मेरे द्वारा उनसे अलग-अलग तरह के सवाल-जवाब करने से उन्हें सहज महसूस कराने में आख़िर सफलता मिल ही गई। पूछे गए कुछ और सवालों के नमूने भी हैं। जैसे–

समतुल्य भिन्न पढ़ाते समय कक्षा 5 के विद्यार्थियों को किसी भी आकृति या वस्तु का आधा हिस्सा दिखाकर पूछा कि इसको पूरा करने के लिए कितना हिस्सा और चाहिए। क्या जितना है उससे कम हिस्सा चाहिए, या ज़्यादा? इस बात का ध्यान रखा गया कि वस्तुएँ उनके परिवेश से ही ली जाएँ। जैसे– रोटी या पराठा।

यहाँ गणितीय बातचीत के लिए 5 चरणों का इस्तेमाल किया जो मुझे कॉलेज के दिनों में समझाए गए थे–

1. प्रतिध्वनि (revoicing) : शिक्षिका विद्यार्थियों की सोच को स्पष्ट करने के लिए उनके उत्तरों को दोहराती हैं।
2. दूसरे शब्दों में कहना (rephrasing) : शिक्षिका विद्यार्थियों से किसी और के विचारों को अपने शब्दों में दुबारा कहने के लिए कहती हैं।
3. तर्क (reasoning) : शिक्षिका विद्यार्थी से पूछती हैं कि वह अन्य विद्यार्थी द्वारा प्रस्तावित विचार से सहमत है या असहमत।
4. विस्तार (elaborating) : शिक्षिका भागीदारी बढ़ाने और समझ को गहरा करने के लिए अन्य विद्यार्थियों को चुनौती देने, विचार में कुछ जोड़ने या विस्तार से बताने के लिए प्रेरित करती हैं।
5. समय देना (waiting) : शिक्षिका अपने समझे गए विचार को अन्य स्थितियों में परखने व सोचने का समय देती हैं।

आइए, इन्हें एक उदाहरण से समझते हैं। जैसे–

प्रतिध्वनि :

शिक्षिका : बताइए इस आधी रोटी को पूरा करने के लिए और कितनी रोटी चाहिए?

विद्यार्थी : आधी रोटी और चाहिए।

दूसरे शब्दों में कहना :

शिक्षिका : (दूसरे विद्यार्थी से) क्या यह जवाब सही है?

दूसरा विद्यार्थी : हाँ।

शिक्षिका : क्या तुम अपने शब्दों में बताओगे कि इस रोटी के आधे टुकड़े को पूरा करने के लिए कितनी रोटी और चाहिए?

दूसरा विद्यार्थी : जी हाँ, जैसा कि विपुल ने कहा कि इस रोटी को पूरी रोटी बनाने के लिए आधी रोटी और चाहिए। इसका मतलब जितनी रोटी है, उतनी ही रोटी और चाहिए।

तर्क :

शिक्षिका : शाबाश! क्या हम सब इस बात से सहमत हैं?

अन्य विद्यार्थी : हाँ, मैं सहमत हूँ क्योंकि दो आधे हिस्सों को मिलाकर पूरा एक ही तो बन रहा है।

विस्तार :

शिक्षिका : बिल्कुल सही। क्या हर बार दो आधे हिस्सों को मिलाकर पूरा एक बनता है? क्या ऐसा रोटी की जगह सेब या अमरूद में भी देख सकते हैं? चलो, इन फलों के दो आधे हिस्सों को जोड़कर देखते हैं। (शिक्षिका ने पहले ही एक सेब और अमरूद दो बराबर हिस्सों में काटकर रखा था।)

समय देना :

शिक्षिका : चलो, कुछ और आधे हिस्सों को मिलाकर पता लगाते हैं कि क्या हमेशा दो आधे हिस्से मिलकर एक पूरा बनाते हैं। (शिक्षिका ने अलग-अलग आकृतियों को दो बराबर हिस्सों में काटकर वे टुकड़े विद्यार्थियों को जाँचने के लिए दिए, और उनके उत्तरों का इन्तज़ार किया।)

इसी तरह, भिन्न बार का इस्तेमाल करके विद्यार्थियों से पूछा कि कैसे पता करें कि कोई भिन्न $\frac{1}{2}$ से बड़ी है या छोटी? साथ ही पूछा कि उन्होंने उत्तर का कैसे पता लगाया। क्या उन्हें किसी तरह की कठिनाई हुई?

विद्यार्थियों ने कहा कि दोनों हिस्सों को एक के ऊपर एक रखकर देख सकते हैं।

हम भिन्न का चित्र बनाकर भी अनुमान लगा सकते हैं कि कौन-सा हिस्सा ज़्यादा होगा, और कौन-सा कम।

जहाँ भिन्न लगभग समान दिखती हैं वहाँ कठिनाई का अनुभव होता है। जैसे– $\frac{4}{6}$ और $\frac{4}{5}$

शिक्षिका : क्या हम इनके चित्र बनाकर पता कर सकते हैं?

मैंने फ्रैक्शन किट का इस्तेमाल किया, और विभिन्न समान अंश वाली भिन्नों की तुलना कराई।

चित्र 1 : विद्यार्थियों को गणितीय बातचीत में शामिल किया जाना ज़रूरी है

1. $\frac{4}{5} > \frac{4}{6}$
2. $\frac{3}{5} < \frac{3}{4}$
3. $\frac{5}{8} < \frac{5}{6}$
4. $\frac{4}{10} < \frac{4}{12}$

शिक्षिका : क्या आप इन सभी उत्तरों से सहमत हैं? क्या प्रत्येक प्रश्न में दी गई भिन्नों के अंश समान हैं?

विद्यार्थी : हाँ।

शिक्षिका : क्या दी गई भिन्नों में सभी हर समान हैं?

विद्यार्थी : नहीं।

शिक्षिका : क्या हम कह सकते हैं कि समान अंश होने पर छोटे हर वाली भिन्न बड़ी होती है?

इस पर कुछ विद्यार्थी सहमत थे और कुछ असहमत।

असहमत विद्यार्थियों के साथ कुछ और मूर्त वस्तुओं के साथ भिन्नों की तुलना की गई। यहाँ यह भी जोड़ना चाहूँगी कि अमूर्त गणितीय बातचीत प्राथमिक कक्षाओं में ज़्यादा कारगर नहीं है। इसमें वास्तविक वस्तुओं को ही ज़्यादातर अपने साथ रखना होता है। मसलन, भिन्न पर बातचीत के दौरान मैंने फ्रैक्शन किट, और जमा-घटा पर बातचीत में पेंसिल और पत्तों का उपयोग किया। साथ ही, विद्यार्थियों का गणितीय वस्तुओं से अन्तःक्रिया करना ज़रूरी है क्योंकि उनकी उम्र के अनुसार वह पूर्णतया अमूर्त विषय को समझ नहीं पाते।

संध्या सिंह, प्राथमिक शिक्षिका, नगर निगम प्राथमिक बाल विद्यालय, महरौली दरगाह, नई दिल्ली

वो पल जिसने मेरी कक्षा को बिल्कुल बदल दिया!

के जेम्स कुमार

बारह साल पहले मैंने पुदुचेरी के कराईकल में एक ग्रामीण प्राथमिक विद्यालय में क़दम रखा। न्यूनतम बुनियादी ढाँचे और आर्थिक रूप से वंचित पृष्ठभूमि से आने वाले विद्यार्थियों के कारण चुनौतियाँ ज़्यादा थीं। अधिकांश विद्यार्थियों को पढ़ने और लिखने में कठिनाई होती थी। कई सहकर्मियों की तरह, मैंने भी पढ़ाने के पारम्परिक तरीक़ों पर ही भरोसा किया। शुरुआत वर्णमाला पहचानने से की, और फिर दो-तीन अक्षरों वाले शब्दों की ओर बढ़ा।

मल्टीग्रेड शिक्षण के कारण कठिनाई और भी बढ़ गई। यक़ीन था कि बहुत बढ़िया तरह से अपना काम कर रहा हूँ। फिर आया वह मोड़ जिसने मेरी सोच को बदल दिया। गर्मियों की छुट्टियों के दौरान मैंने अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन द्वारा आयोजित पाँच दिवसीय कार्यशाला में भाग लिया। यहाँ भारतीय भाषाविद्, ईएलटी विशेषज्ञ और सामाजिक कार्यकर्ता डॉ के एन आनन्दन से मिला। उन्होंने इस विचार से परिचित कराया कि भाषा सिखाई नहीं जाती है, इसे अर्जित किया जाता है, ठीक वैसे ही जैसे हम घर की भाषा सीखते हैं। उनका नज़रिया चर्चा-उन्मुख शिक्षणशास्त्र पर केन्द्रित था। यह एक ऐसी पद्धति है जो विद्यार्थियों को भाषा का सार्थक उपयोग करने के लिए प्रोत्साहित करती है।

डॉ आनन्दन ने लाइव क्लासरूम सत्र आयोजित किए। उन्होंने दिखाया कि यह शिक्षण पद्धति व्यावहारिक रूप से कैसे काम करती है। यह देखकर बहुत आश्चर्य हुआ कि कैसे ये विद्यार्थी, यहाँ तक कि अँग्रेज़ी का सीमित ज्ञान रखने वाले भी, रचनात्मकता और आत्मविश्वास के साथ भाषा का उपयोग करने लगे थे।

कक्षा पाँच के विद्यार्थियों के साथ चर्चा-उन्मुख शिक्षण पद्धति का प्रयोग किया जिसमें कहानी सुनाना, गीत रचना, वर्णन और संवाद शामिल थे। इनमें से प्रत्येक गतिविधि के लिए पाँच दिन और प्रतिदिन लगातार दो कालखण्डों का समय लिया। इस दौरान पाठ्यपुस्तक को एक तरफ़ रख दिया, और केवल चित्रों का उपयोग किया। यह प्रक्रिया संरचित, संवादात्मक और आकर्षक थी। इससे विद्यार्थियों को न केवल अपने विचार व्यक्त करने में मदद मिली, बल्कि निर्देशित सम्पादन के माध्यम से वे अपनी लिखित अँग्रेज़ी भी बेहतर कर पाए।

शुरुआत में गाँव के दृश्य वाला चित्र दिखाया। विद्यार्थियों को प्रोत्साहित किया कि वे उस दृश्य को ध्यान से देखकर उसका वर्णन करें। इसके लिए इस बात की छूट भी दी कि वे अँग्रेज़ी और घर की भाषा, दोनों को मिलाकर उत्तर दे सकते हैं। मैंने farmer, hen, straw, cartwheel जैसे प्रमुख शब्दों को ब्लैकबोर्ड की एक तरफ़ लिख दिया ताकि साझा शब्द बैंक बनाया जा सके।

विद्यार्थियों से मार्गदर्शित प्रश्न (Guided Questions) पूछे, उनके अवलोकन, क्रियाकलाप और राय के बारे में जाना, और ब्लैकबोर्ड पर लिख दिया। वे जोड़े में आकर प्रत्येक वाक्य को ज़ोर से पढ़ते थे। हमने विचारों को तीन अनुच्छेदों में लिखा–

पहला, चित्र में क्या-क्या दिखाई दे रहा है?

दूसरा, कौन-सी क्रियाएँ हो रही हैं?

तीसरा, दृश्य के बारे में उनकी क्या राय है?

विद्यार्थियों ने कैपिटलाइज़ेशन (वाक्य में कब और कहाँ कैपिटल लेटर लिखना है, जैसे– वाक्य की शुरुआत में, noun में, आदि) और विराम चिह्न जैसी लेखन परम्पराओं का पालन करते हुए संशोधित विवरण को नोटबुक में कॉपी किया।

अगले दिन, विद्यार्थियों को छोटे-छोटे समूहों में बाँटा और एक अन्य विषय वाला चित्र दिखाया। उन्होंने समूह में अपने विचारों पर चर्चा की, और लिखने से पहले मौखिक रूप से वाक्य साझा किए। प्रत्येक समूह ने अनुच्छेद पर आधारित विवरण लिखने के लिए एक दूसरे के साथ सहयोग किया। कुछ समूहों को शब्द क्रम या काल की संगति (जैसे भूतकाल, वर्तमान काल, भविष्य काल) को लेकर परेशानी हुई, इसलिए मैंने इस तरह के सवाल पूछे–

क्या यह वाक्य सही लगता है?

पहले क्या आना चाहिए? आदि।

इसके बाद हमने एक समूह के काम को चुना जिसका सम्पादन पूरी कक्षा को करना था। मैंने विद्यार्थियों से कुछ सवाल पूछकर विभिन्न प्रकार की ग़लतियों को पहचानने, और उन्हें ठीक करने के लिए कहा। जैसे–

विषयगत : क्या विवरण व्यवस्थित और पूर्ण है?

वाक्य संरचना : क्या कोई शब्द छूट गया है? क्या यह शब्द क्रम सही है?

रूपात्मक और व्याकरण : Children is playing, या Children are playing?

स्पेलिंग और विराम चिह्न की ग़लतियों को ठीक करने के लिए उन्होंने पाठ्यपुस्तक या कक्षा चार्ट का सहारा लिया।

सुधारों को उजागर करने के लिए रंगीन मार्करों का उपयोग किया, और कक्षा में फ़ाइनल चार्ट को रखा ताकि विद्यार्थी उसे देख सकें। अन्त में, उन्हें एक नया चित्र और दिया तथा व्यक्तिगत रूप से विवरण लिखने को कहा। इसके लिए उन्होंने पिछले सत्रों में जो कुछ सीखा था, उसका उपयोग किया। इन विवरणों को कक्षा के सामने रखा, और साथियों का फ़ीडबैक पाने के लिए कुछ सवाल पूछे। जैसे–

चित्र 1 : कहानियाँ पढ़ने, बनाने और उन पर सार्थक बातचीत से लेखन कौशल विकसित होता है

क्या यह विवरण सुव्यवस्थित है?

क्या इसमें शब्दरूप सम्बन्धी ग़लतियाँ हैं?

क्या उन्होंने उचित विराम चिह्नों का उपयोग किया?

बार-बार की बातचीत ने विद्यार्थियों को भाषा के उपयोग को बेहतर करने में मदद की। समूह की मदद से लेकर स्वतंत्र रूप से कार्य करने के इस क्रमिक तरीक़े से विद्यार्थियों को वर्णन-लेखन की विशेषताओं को गहराई से समझने में मदद मिली। साथ ही, अपने साथियों, शिक्षकों के साथ होने वाली बातचीत का उपयोग करके वे अपनी ग़लतियों को रचनात्मक रूप से सुधार पाए। बातचीत, गीत और विवरण / कहानी के लिए भी यही तरीक़ा अपनाया।

बातचीत के लिए, एक परिचित तस्वीर दिखाकर चर्चा शुरू की, और पूछा कि ये कौन-से पात्र हैं, और वे क्या कह रहे होंगे। विद्यार्थियों ने अलग-अलग बातें सुझाईं जिन्हें ब्लैकबोर्ड पर लिखा। हमने लोकतांत्रिक प्रक्रिया का उपयोग करके उपयुक्त उत्तरों को चुना, और पात्रों के बीच होने वाले संवाद लिखे।

इसके बाद उन्होंने समूहों में अपने विचारों का आदान-प्रदान किया, और छोटे-छोटे वार्तालाप लिखे। जब वे ऐसा कर रहे थे, उनकी बातचीत पर नज़र रखी, और सुनिश्चित किया कि प्रत्येक विद्यार्थी इसमें योगदान दे और आवश्यकतानुसार सुधार किया।

गीत समूह द्वारा लेखन की शुरुआत कक्षा में साझा किए गए गीत से हुई : *'Happiness is something that you give it away...'* हमने इसे सुना, ताली बजाई, और धीरे-धीरे प्रत्येक समूह ने मुख्य पंक्तियों को बदलकर अपना स्वयं का गीत लिखा। कक्षा को गीत के पैटर्न और स्वर की पहचान करने में मार्गदर्शन दिया। लिखे गीतों को ज़ोर से गाया जिससे सीखना आनन्ददायक और यादगार अनुभव बन गया। कक्षा द्वारा सम्पादन करने के लिए एक समूह कविता चुनी, और चर्चा की कि क्या यह कविता पैटर्न के अनुरूप है और वांछित सन्देश देती है।

अन्त में, उन्होंने व्यक्तिगत रूप से अपने गीत लिखे। उल्लेखनीय बात यह थी कि सीखने में कठिनाई महसूस करने वाले विद्यार्थियों ने भी आत्मविश्वास के साथ लिखने का प्रयास किया। कई बार तो वे गीत की पंक्तियाँ लिखने से पहले ही गाने लगते थे।

विवरण या कहानी लिखने के लिए पहले तो पूरी कक्षा ने एक तस्वीर के आधार पर कहानी सुनाई। फिर हमने शुरुआत और अन्त पर चर्चा की, तथा बीच में आने वाली घटनाओं के क्रम पर विचार-विमर्श किया। कुछ गहन प्रश्न पूछकर विचारों को उजागर किया और धीरे-धीरे ब्लैकबोर्ड पर कक्षा विवरण लिखा। फिर विद्यार्थियों ने इसे नोटबुक में कॉपी किया, संरचना और भाषा के उपयोग, दोनों को भली-भाँति समझा। उन्होंने समूहों में कहानियाँ बनाईं और मार्गदर्शन के साथ उन्हें सम्पादित किया। इससे विद्यार्थियों को सुसंगतता, तार्किक अनुक्रम और काल के उचित उपयोग के महत्त्व को समझने में मदद मिली। जब उनसे व्यक्तिगत रूप से कहानी लिखने को कहा, उन्होंने छोटी, सार्थक कहानियाँ लिखीं। इससे पता चला कि गतिविधियों, पात्रों और भावनाओं को स्पष्ट रूप से व्यक्त करने की उनकी क्षमता में वृद्धि हुई है।

सार्थक बातचीत और निर्देशित सहायता के माध्यम से तीन महीनों में, विद्यार्थियों में वर्णन, वार्तालाप, कहानी और गीत / कविता लेखन के कौशल विकसित हुए। प्रभाव तब साफ़ नज़र आया जब हमने एक साहित्य प्रदर्शनी आयोजित की। इसमें विद्यार्थियों ने बड़े गर्व और उमंग के साथ अपनी पहली कक्षा पत्रिका का प्रदर्शन किया!

के जेम्स कुमार, शिक्षक, सरकारी प्राथमिक विद्यालय पेथुचेट्टीपेट, पुदुचेरी

अँग्रेज़ी से नलिनी रावल द्वारा अनुवादित।

ज़रूरत है गहन देखभाल व सुविचारित अवसरों की

शांति ठाकुर

एक कार्यशाला के दौरान, मैं शिक्षकों के साथ विशेष दक्षताओं वाले विद्यार्थियों की पहचान कैसे करें, उनके साथ कैसे काम करें, आदि के बारे में बात कर रही थी। कार्यशाला के बाद एक प्राथमिक विद्यालय के प्रधान पाठक मिले, और अपने विद्यालय की एक छात्रा नेहा के बारे में कुछ बातें साझा कीं। जानकर अच्छा लगा कि वे संवेदनशील हैं, और उसकी समस्या को समझना-सुलझाना चाहते हैं।

मैंने उनसे कहा कि नेहा से मिलने विद्यालय आऊँगी। कई दिनों तक विद्यालय गई, और दूर से ही उसके व्यवहार, उसके काम, शरारतें, आदि ध्यान से देखती रही। मैंने पाया कि नेहा को बोलने में दिक़्क़त है। वह इशारों से कुछ कहने की कोशिश करती है, और ज़ोर से बोलने की कोशिश में कुछ आवाज़ें तो निकालती है, लेकिन स्पष्टता से बोल नहीं पाती है।

उसमें तीव्र ग़ुस्सा था। विद्यार्थियों को धक्का देना, उन पर पानी डाल देना, सामान छीन लेना, मारपीट करना, पेंसिल फेंक देना, कॉपी फाड़ देना, उन पर पानी की बोतल फेंक देना उसके व्यवहार का हिस्सा था। कक्षा में उसे बैठाना, किसी गतिविधि में शामिल करना शिक्षक के लिए बहुत मुश्किल हो रहा था। समझाने या डाँटने का उस पर कोई असर नहीं होता था।

इसी कार्यशाला में, शिक्षकों से 'प्रशस्त ऐप' (PRASHAST App) के बारे में बात की थी। एनसीईआरटी द्वारा विकसित किया गया यह ऐप पूर्व प्राथमिक से लेकर 12वीं तक के विद्यार्थियों को दिव्यांगता स्क्रीनिंग की सुविधा प्रदान करता है। विद्यालय में विद्यार्थी अगर किसी तरह की समस्या से जूझ रहे हैं तो उनकी पहचान करने में इसका उपयोग किया जा सकता है। इस ऐप में दिए गए बिन्दुओं का सन्दर्भ लेते हुए शिक्षक से नेहा के व्यवहार पर बात कर उसे समझने की कोशिश की। ऐप में दिए गए बिन्दुओं के अनुसार पहचान करने पर नेहा 'मानसिक मन्दता' (intellectual disability) की श्रेणी में आती थी। चिकित्सक की दृष्टि से समझने के लिए मैं और प्रधान पाठक, नेहा को अस्पताल लेकर गए। मनोचिकित्सक ने उसे 'मानसिक रूप से मन्द' बताया, और उसका डिसेबिलिटी कार्ड भी बनाया।

नेहा की समस्या को हम समझ गए थे। अब बारी थी उस समस्या को सुलझाने की जिसमें सबकी साझी भूमिका होनी थी। यह बात उसके माता-पिता को भी बतानी थी ताकि उसे सिर्फ़ विद्यालय में ही नहीं, घर पर भी सहयोग मिल सके। माता-पिता अकसर अपने विद्यार्थी के बारे में ऐसी कोई बात समझना या मानना नहीं चाहते। वे अकसर इसे उसकी आदतें, लापरवाही, ग़ुस्सा, आदि ही मानते हैं। इसके चलते विद्यार्थी की पिटाई, उस पर सख़्ती करना बढ़ जाता है। लेकिन यह समस्या का समाधान नहीं, उसे बढ़ाना है। उनसे कई बार बात करने और समझाने के बाद विद्यालय के स्टाफ़ से बात की क्योंकि नेहा के इर्द-गिर्द जो भी लोग हैं, सबका समझना ज़रूरी था। मुख्य बात थी कि उस पर नाराज़ नहीं होना है, उसका साथ देना है, उसे समझना है।

हमें इस बारे में भी सोचना था कि नेहा में जो ऊर्जा है, जिसके कारण वह बेचैन होकर तोड़-फोड़ और झगड़ा करती है, उसे ठीक से काम में लाना होगा। उसका थकना ज़रूरी है। थकेगी नहीं तब तक बैठेगी नहीं। उसके लिए ऐप में सुझाई गई कुछ योजनाएँ बनाईं। जैसे–

1. खेल में उसकी ऊर्जा का अधिक उपयोग करना। उसे कहते, "जाओ, दौड़कर जाओ और उस पेड़ को छूकर आओ।" इसमें शिक्षक और कुछ विद्यार्थी भी शामिल किए। वह ख़ुश होकर दौड़ती, और जल्दी-जल्दी दौड़ने व छूकर आने पर और ख़ुश होती। वह थकती तो थोड़ी देर बैठती। यह प्रक्रिया एक सप्ताह तक चली।

चित्र 1: सहयोग और आत्मविश्वास की विद्यार्थियों के सीखने में महत्त्वपूर्ण भूमिका है

2. फिर उसके लिए दूसरी गतिविधि की। इसमें चना, मटर, उड़द, चावल, गेहूँ जैसे अनाज मिलाकर रख दिए। नेहा सहित अन्य विद्यार्थियों को भी अनाज को अलग-अलग करके कटोरियों में डालने को कहा। इसमें ध्यान केन्द्रित हो रहा था और उन्हें मज़ा आ रहा था। वह ग़लती भी कर रही थी, लेकिन लगातार अनाज अलग करके जल्दी से कटोरी में डाल देना चाहती थी। 'अच्छा किया', जैसे प्रोत्साहन उसे ख़ुश कर रहे थे।
3. इसी तरह के एक और टास्क में फूल और पत्तियों को अलग करना था। नेहा के लिए समय-समय पर गतिविधि बदलनी ज़रूरी थी क्योंकि नई गतिविधि करने में उसे अच्छा लगता था।
4. उसे बीच-बीच में कुछ समय के लिए गोल-चौकोर बनी आकृतियों की पेंटिंग करने को भी देते थे।

यह गतिविधियाँ क़रीब एक महीने तक की गईं। इन सभी गतिविधियों में अन्य विद्यार्थी भी शामिल किए ताकि नेहा ख़ुद को एकाकी व उपेक्षित महसूस न करे।

बाक़ी विद्यार्थी लिखना-पढ़ना भी सीख रहे थे, लेकिन नेहा इन गतिविधियों में ही व्यस्त थी। शिक्षकों ने इस बात को समझा, और उसे बिना किसी जल्दबाज़ी के पूरा समय दिया। धीरे-धीरे वह कक्षा में बैठने लगी। गतिविधियों में उसका मन लग रहा था। उसके ऊबने से पहले ही गतिविधि बदल दी जाती थी। वह अब नम्बर और अक्षर वाले खेल खेलने लगी थी। मसलन, दाल-चावल या फूल-पत्तियों को अलग करने के बजाय संख्या, अंक या अक्षरों को अलग करना। इस पूरे काम में बहुत धैर्य की ज़रूरत थी।

चूँकि नेहा को बोलने में भी दिक़्क़त थी तो इसके लिए भी कुछ गतिविधियाँ शुरू कीं। इनमें सीटी बजाना, फुग्गा फुलाना, मोमबत्ती बुझाना, काग़ज़ के टुकड़े करके फूँककर उड़ाना, बाँसुरी बजाना, आदि शामिल था। उसके माता-पिता से भी बात की गई कि वे घर पर भी उसके साथ कुछ गतिविधि करते रहें। जैसे– घर के छोटे-मोटे काम, सब्ज़ी छाँटना, कपड़े सुखाना, घर के लोगों को पानी देना, कंघी करना, मुँह पोंछना, आदि। जैसे-जैसे वह काम करने की तरफ़ बढ़ रही थी उसके माता-पिता भी ख़ुश थे। उनके लिए यह सब कुछ करना बहुत श्रमसाध्य था।

कक्षा 2 में नेहा के साथ शिक्षण गतिविधियाँ शुरू की गईं। जैसे– बिन्दुओं को मिलाना, जोड़ी बनाना, फूल-पत्ती अलग करना, गिट्टी गिनकर अलग करना, फ़्लैशकार्ड से खेलना, आदि। अब वह कक्षा 3 में है, और उसमें काफ़ी बदलाव आए हैं। वह पढ़ने-लिखने लगी है। उसके साथ गतिविधियाँ अब भी जारी हैं। इस अनुभव में यह बात महत्त्वपूर्ण थी कि शिक्षक ने उसकी चुनौती को समझा, और हिम्मत हारे बग़ैर पूरी समझ व संवेदना से उसके साथ काम भी किया।

शांति ठाकुर, ब्लॉक रिसोर्स पर्सन, बोरोडिपा, ब्लॉक पुसौर, रायगढ़, छत्तीसगढ़

कहानियों के ज़रिए प्रभावी होता है शिक्षण

एस कविता

चौथी कक्षा के विद्यार्थी सीखने की यात्रा में अपनी-अपनी गति के हिसाब से बड़ी ख़ूबसूरती के साथ आगे बढ़ रहे थे, फिर भी मेरे दिमाग़ में एक अजीब-सी बेचैनी बनी हुई थी। रोज़ मुझे विद्यार्थियों की छोटी-छोटी शिकायतों का सामना करना पड़ता था। मसलन,

"मैम, जब हम खेलते हैं, वह हमेशा मेरे आगे चलती है!"

"मैम, खेलते समय उसने फ़लाँ चीज़ को तोड़ दिया!"

"मैम, उसने बिना पूछे मेरी रबड़ ले ली!"

"मैम, उसने उससे कहा कि मेरे साथ न खेले!"

लगातार आती ये शिकायतें काम में रुकावटें पैदा करतीं। अधिकांश समय विद्यार्थियों को शान्त करने में बीत जाता। ऐसा भी नहीं था कि ये शिकायतें किसी बुरे व्यवहार का नतीजा थीं। ये छोटी-छोटी घटनाएँ थीं जिन्हें आसानी से नज़रन्दाज़ किया जा सकता था। रोज़ाना की बातचीत के ज़रिए, धीरे-धीरे हम असली ग़लतियों और साधारण ग़लतफ़हमियों के बीच के अन्तर को समझने लगे।

एक शिक्षक के तौर पर मैंने हमेशा ऐसी कक्षा बनाने की कोशिश की है जो न केवल बुद्धि, बल्कि चरित्र का भी विकास करे। फिर भी, विद्यार्थियों की एक दूसरे की छोटी-छोटी ख़ामियों पर उँगली उठाने की आदत चुनौती पैदा कर रही थी। मुझे चुनौतियों का सामना करने के लिए कहानियों का सहारा लेना पसन्द है। इसलिए सोचा कि कहानी सुनाई जाए। मेरे लिए कहानियाँ हमेशा से एक जादुई छड़ी रही हैं। मैं इनका उपयोग भाषा का परिचय

देने या कल्पना जगाने के लिए करती हूँ। विद्यार्थियों के दिल और दिमाग़ को निखारने में कहानियाँ कारगर होती हैं। मैंने *गजपति कुलपति* की मज़ेदार कहानी सुनाने का फ़ैसला किया। कहानी के पात्रों का प्रिंट आउट लिया। विद्यार्थियों से चित्रों को रँगने, उन्हें कट आउट करने को कहा। फिर इनका उपयोग 'गजपति कुलपति आछू' सुनाने के लिए किया। कहानी सुनाते समय उनकी सोच को बढ़ाने के लिए कुछ सवाल पूछे–

"हाथी गाँव में कैसे आया होगा?"

जवाब थे, शायद वह रास्ता भूल गया होगा; किसी ने उसे उसके पसन्दीदा फल, यानी केले का लालच दिया होगा; शायद वह किसी दोस्त की तलाश में आया होगा; आदि।

कक्षा विद्यार्थियों के विचारों से जीवन्त हो उठी। मानो उनकी कल्पनाएँ नाच उठी हों।

"पोस्टमैन या केले बेचने वाले को गजपति कुलपति पर ग़ुस्सा क्यों नहीं आया?"

एक बच्ची ने स्पष्ट शब्दों में जवाब दिया, "क्योंकि गजपति कुलपति किसी को चोट नहीं पहुँचाना चाहता था। वह बीमार था।

चित्र 1: कहानियों के उपयोग से भाषा के कई प्रतिफलों को प्राप्त करने में मदद मिलती है

जब उसे एहसास हुआ कि उसकी छींक से लोगों को परेशानी हो रही है, उसने छिपने की कोशिश भी की। तब कोई ग़ुस्सा क्यों करे?"

उसके जवाब ने मुझे चौंका दिया। हम वयस्क लोग भला दुनिया को कब इतनी करुणा और समझ के साथ देख पाते हैं!

विद्यार्थियों ने कहानी को अपने अनूठे तरीक़ों से सुनाना शुरू किया। कुछ ने घटनाओं को बढ़ा-चढ़ाकर सुनाया। कुछ ने मुख्य घटनाओं पर ध्यान दिया। एक ने नाटकीय 'आछू!' पर ज़ोर दिया तो दूसरे ने हास्य पर। यहाँ तक कि चुप रहने वाले विद्यार्थियों ने भी अपने अन्दाज़ में कहानी सुनाई।

इसके बाद विद्यार्थियों को चार समूहों में बाँटा। उन्हें भूमिकाएँ सौंपने, स्क्रिप्ट तैयार करने, रिहर्सल करने को कहा। वैसे तो यह गृहकार्य था, पर देखा कि मध्याह्न भोजन के समय वे साथ बैठकर फुसफुसाते हुए संवाद बोल रहे थे, दृश्यों को निखारने-सँवारने में लगे थे। अगले दिन समूहों ने प्रस्तुतियाँ दीं, और उन साथियों को प्रोत्साहित किया जिन्हें मदद की ज़रूरत थी।

इन समूहों में विद्यार्थियों ने कहानी के पात्रों का गुण-अवगुण के आधार पर विश्लेषण किया। मसलन, कौन प्रशंसनीय था; किसे सुधारा जा सकता था; आदि। प्रत्येक समूह ने एक-एक पात्र चुना– गजपति कुलपति, दादी, विद्यार्थी और केले बेचने वाला। समूह चर्चा के बाद, समूहों ने अपने विचार साझा किए। उदाहरण के लिए, गजपति कुलपति दयालु और दूसरों का ध्यान रखने वाला है। वह दीवार के पीछे जा खड़ा हुआ ताकि उसकी वजह से दूसरे लोग परेशान न हों; गजपति कुलपति के कारण भले ही केले वाले को परेशानी हुई, फिर भी उसने उसके लिए घर बनाया क्योंकि गजपति कुलपति का इरादा किसी को चोट पहुँचाने का नहीं था; आदि।

इस गतिविधि को आधार बनाकर कोशिश की कि विद्यार्थी अपने मन के भीतर झाँकें। मैंने कहा, "अपनी आँखें बन्द करो। किसी दोस्त के बारे में सोचो, और दो मिनट में बताओ कि उसमें कौन-सा गुण अच्छा है, और कौन-सी बात ऐसी है जिसे वह सुधार सकता है।" पहले तो कमरे में सन्नाटा छा गया, फिर उनके द्वारा साझा की गई जानकारियों से पूरी कक्षा गूँजने लगी। मसलन, शाकम्बरी सभी से दोस्ती करती है; सुनीता कभी किसी को नहीं डाँटती; शिवकुमार की लिखावट बहुत सुन्दर है; सोमशेखर अपना खाना सभी के साथ बाँटता है; गीता बहुत हँसमुख है; आदि। काफ़ी प्रोत्साहित करने के बावजूद किसी ने भी यह नहीं बताया कि उसके दोस्त को अपनी किस आदत को बदलना चाहिए। छोटे विद्यार्थी कितनी सकारात्मक भावना वाले होते हैं! मैंने बताए हुए सभी गुणों की सूची बनाई, और उसे दीवार पर चिपका दिया। चारों ओर ख़ुशी की लहर दौड़ गई। "यह मेरा गुण है!" "यह तुम्हारा है!" वे गर्व से मुस्कुरा रहे थे, और एक दूसरे की ख़ूबियों की ओर इशारा कर रहे थे।

कहानी सुनाने की यात्रा ने इस विश्वास को पुख़्ता किया कि इस तरह के गहन पाठ सिखाने से नहीं, बल्कि अनुभव से सीखे जाते हैं, ख़ासकर ऐसे अनुभवों से जो दिल को छू जाते हैं। एक साधारण कहानी के माध्यम से विद्यार्थी एक दूसरे को प्यार भरी नज़रों और खुले दिल से देखने लगे। दोष खोजने के बजाय गुण खोजे। शिकायत करने के बजाय एक दूसरे की सराहना करने लगे। जो बात छींकने वाले हाथी की कहानी से शुरू हुई, वह समानुभूति, दयालुता और भावनापूर्ण बुद्धिमत्ता के एक शक्तिशाली सबक़ के रूप में विकसित हुई। कोई फटकार नहीं, कोई व्याख्यान नहीं... केवल कल्पना, चिन्तन और कहानी साझा करने के माध्यम से एक सौम्य मार्गदर्शन। उस पल मैंने सिर्फ़ एक कक्षा नहीं देखी। विद्यार्थियों के दिमाग़ का ऐसा समुदाय देखा जो न केवल पढ़ना-लिखना, बल्कि जीने की कला और एक दूसरे का ध्यान रखना भी सीख रहा था।

एस कविता, शिक्षिका, एन जीवरतिनम गवर्नमेंट गर्ल्स मिडिल स्कूल, वीरमपट्टिनम, पुदुचेरी

अँग्रेज़ी से नलिनी रावल द्वारा अनुवादित।

कक्षा में मेरे शुरुआती दिन

मनोहर हिरेमठ

मैं एक कला शिक्षक हूँ। कक्षा में अपने कुछ शुरुआती दिनों को कभी नहीं भूल पाऊँगा। हुआ यूँ कि कक्षा में मेरे आने के बाद विद्यार्थी कुछ देर तक तो चुपचाप बैठे रहे, लेकिन 10-15 मिनट बाद उन्होंने शोर मचाना शुरू कर दिया। मुझे प्रशिक्षण में बताया गया था कि विद्यार्थियों को ऐसे वातावरण में पढ़ाना चाहिए जिसमें उन्हें डर न लगे। ऊँची आवाज़ में नहीं बोलना है, और उन पर ग़ुस्सा नहीं करना है। इसलिए मैंने उनसे बात करने की कोशिश की। हालाँकि, क्या बातचीत हो सकती है इसको लेकर मैं ख़ुद भी थोड़ा डरा हुआ था। मैंने पूछा, "क्या आपको ड्राइंग पसन्द है; क्या आपको पेंटिंग करना अच्छा लगता है; क्या हम कोई ड्राइंग बनाएँ?" कुछ विद्यार्थियों ने इन सवालों का जवाब दिया, लेकिन बाक़ी ने कक्षा में खेलना शुरू कर दिया।

यह सिलसिला दो-तीन दिन चलता रहा। काफ़ी कोशिश करने के बाद भी मैं कक्षा को व्यवस्थित नहीं कर सका। कक्षा के लिए जिन गतिविधियों की योजना बनाई थी, उनमें से कुछ भी नहीं करवा पाया था। कक्षा का अधिकांश समय विद्यार्थियों को चुप कराने, और उनकी आपसी शिकायतों को दूर करने में ज़ाया हो रहा था। वे एक के बाद एक, तरह-तरह की शिकायतें लेकर आते रहते। मैं निराश होने लगा।

अन्ततः, मैं अपने विद्यालय के प्रिंसिपल से मिला, और उन्हें अपनी समस्या बताई। उन्होंने मुझे दूसरे अनुभवी शिक्षकों की कक्षाओं का अवलोकन करने की सलाह दी। मैंने रोज़ दो अलग-अलग कक्षाओं का अवलोकन करना शुरू किया। समझने की कोशिश की कि ये शिक्षक किस तरह से गतिविधियाँ करवाते हैं, और विद्यार्थियों को उनमें किस तरह शामिल करते हैं। यह भी देखा कि जो विद्यार्थी मेरी कक्षा में बहुत शोर मचाते हैं, उनकी कक्षाओं में बिल्कुल अलग तरह से व्यवहार कर रहे हैं। सोचने लगा कि ये विद्यार्थी ऐसा क्यों कर रहे हैं। मेरी कक्षा में शोर मचाते हैं, लेकिन इनकी कक्षाओं में इतना अच्छा व्यवहार कर रहे हैं। मैंने इन शिक्षकों से बात की और इन प्रश्नों के सन्दर्भ में सुझाव भी माँगे। धीरे-धीरे उन विचारों को अपनी कक्षा में लागू करना शुरू कर दिया। इस दौरान कक्षा के लिए विभिन्न प्रकार के पैटर्न, अलग-अलग ब्रशों के नाम, और उनका उपकरण व तकनीक के रूप में उपयोग करने के तरीक़ों पर कुछ चार्ट तैयार किए। ऐसे चार्ट भी बनाए जिनसे समझ में आए कि प्राथमिक रंगों को मिलाकर द्वितीयक रंग कैसे बनाए जा सकते हैं। सभी चार्ट इसलिए डिज़ाइन किए गए थे कि विद्यार्थी अपने हाथों से काम करते हुए अपने अनुभवों से सीख सकें। जब विद्यार्थी कक्षा में आते, हम उन गतिविधियों से शुरुआत करते जिनमें उपकरण व तकनीक का उपयोग होता। लेकिन यह तरीक़ा भी ठीक से काम नहीं कर रहा था, और तब मुझे एहसास हुआ कि ऐसी गतिविधियाँ तैयार करनी होंगी जो विद्यार्थियों की कला में रुचि और उनके सीखने के स्तर पर आधारित हों।

अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन की साथी ने विद्यार्थियों के सीखने के स्तर के आधार पर गतिविधियाँ तैयार करने में मेरी मदद की। मैंने महसूस किया कि अगर विद्यार्थी अपनी कल्पना से चित्र बनाते हैं तो वे पेंटिंग में अधिक रुचि लेते हैं। इसी को ध्यान में रखते हुए, विद्यार्थियों को इस बात के लिए प्रोत्साहित किया कि वे अपनी कल्पना का उपयोग करके रेखाचित्र बनाएँ। इसका असर यह हुआ कि उन्होंने रुचि के साथ चित्र बनाना शुरू कर दिया।

पैटर्न बनाना सिखाते समय, विद्यार्थियों को समझाया कि पैटर्न कैसे बनाए जाते हैं, और उन्हें कुछ पैटर्न दिखाए। लेकिन उन्होंने मेरे ही काम की नक़ल करनी शुरू कर दी। मैंने फ़ाउण्डेशन की साथी के सुझाव का अनुसरण किया कि विद्यार्थियों को ख़ुद से सोचने, और अपने विचारों पर ध्यान देने का मौक़ा देना चाहिए। उन्होंने कहा था, "जब आप विद्यार्थियों को पैटर्न बनाना सिखाते हैं, वे बस वैसा ही करेंगे जैसा आपने दिखाया है। इसके बजाय आप पहले उन्हें पैटर्न की अवधारणा से परिचित कराएँ, एकदम से काग़ज़ न दें। पहले उन्हें चॉक दें, और विद्यालय के फ़र्श पर चित्र बनाने दें।"

बातचीत के दौरान उन्होंने यह भी कहा था, "विद्यार्थियों से कहें कि उन्हें रोज़मर्रा की ज़िन्दगी में जहाँ भी पैटर्न दिखते हैं, उन्हें ध्यान से देखें। जैसे– कपड़ों और घर के पर्दों पर बने हुए पैटर्न या नरम मिट्टी पर बने जूतों के निशान, आदि। ये सभी अलग-अलग तरह के पैटर्न हैं। विद्यार्थियों को बिना किसी रोक-टोक के इन पैटर्नों को तलाशने दें, और जो उन्होंने देखा उसके आधार पर फ़र्श पर चित्र बनाने के लिए कहें।" इससे मुझे बहुत मदद मिली, और विद्यार्थियों को रचनात्मक रूप से सोचने तथा अपने तरीक़े से गतिविधि करने का मौक़ा मिला। इससे कक्षा में उनकी रचनात्मकता बढ़ी।

अब अगली चुनौती पर काम करना था। यानी, यह सुनिश्चित करना था कि विद्यार्थी कक्षा में गड़बड़ न करें, और जो कुछ हम कर रहे हैं उस पर अधिक ध्यान दें। पहली कक्षा के विद्यार्थियों से कहा कि वे कक्षा शुरू होने से पहले पाँच मिनट ध्यान लगाकर व शान्त होकर बैठें। विद्यार्थियों के बैठने के बाद उनसे कहा, "मैं अब एक संगीत बजाऊँगा, और आपको इसे अपनी आँखें बन्द करके सुनना होगा। जब आपसे कहूँ, तब ही आप

अपनी आँखें खोल सकते हैं।" ध्यान के दौरान एक विद्यार्थी हँसने लगा, दूसरा पलकें झपकाने लगा, एक बात करने लगा, और एक अन्य शोर मचाने लगा। इसके बावजूद मुझे लगा कि यह गतिविधि उपयोगी थी। पाँच मिनट के ध्यान के बाद विद्यार्थियों ने गतिविधियाँ शुरू कर दीं।

एक और चुनौती यह थी कि जब विद्यार्थियों को पेंट और क्रेयॉन दिए जाते, वे उन्हें दूसरों के साथ साझा नहीं करते और अपनी जेबों में छिपा लेते थे। इसमें उनकी ग़लती नहीं थी, क्योंकि उन्हें क्रेयॉन बहुत पसन्द थे। इस बात को समझकर कक्षा में एक नया तरीक़ा अपनाया। मैंने विद्यार्थियों के एक समूह को क्रेयॉन का डिब्बा दिया, लेकिन दूसरे को नहीं। उस समूह के विद्यार्थियों ने क्रेयॉन माँगे, लेकिन मैंने मना कर दिया। मना करने का कारण पूछने पर मैंने कहा, "आपके कुछ साथियों ने पिछली कक्षा के दौरान क्रेयॉन ले लिए हैं, और अब हमारे पास क्रेयॉन का सिर्फ़ एक ही डिब्बा है। इसलिए कृपया पेंसिल का इस्तेमाल करें।"

उन्होंने ज़ोर देकर कहा, "नहीं, हमें भी क्रेयॉन चाहिए।"

मैंने कहा, "आपको भी क्रेयॉन दूँगा, लेकिन कक्षा के कुछ नियम हैं। अगर आप उन नियमों का पालन करेंगे तो आपको पेंसिल, रंग, ब्रश, सब कुछ दूँगा।"

विद्यार्थी नियमों का पालन करने के लिए सहमत हो गए। प्रत्येक समूह से कहा कि वे दिए गए क्रेयॉन के डिब्बे के रंगों को गिनें। रंग भरने के बाद हर हफ़्ते एक विद्यार्थी सभी क्रेयॉन वापस डिब्बे में रखने की ज़िम्मेदारी लेगा। दो-तीन महीनों में यह गतिविधि विद्यार्थियों के लिए एक सामान्य दिनचर्या बन गई। अब क्रेयॉन का ग़ायब होना काफ़ी कम हो गया है। यह तरीक़ा अच्छा था।

मनोहर हिरेमठ, कला शिक्षक, अज़ीम प्रेमजी विद्यालय, कलबुर्गी, कर्नाटक

अँग्रेज़ी से नलिनी रावल द्वारा अनुवादित।

कक्षा में बातचीत है ज़रूरी

विनीता चौकसे

मेरी रुचि हमेशा से ही शिक्षण कार्य में रही है। मैंने 2001 में अपने गाँव के विद्यार्थियों को पढ़ाना शुरू किया था। 12 वर्षों बाद शासकीय विद्यालय से जुड़ी। अब मुझे अकसर प्राथमिक कक्षाओं के विद्यार्थियों को पढ़ाने के अवसर मिलते हैं। अपनी पसन्द का काम मिल जाने से हर बार यही कोशिश रहती है कि कुछ नया, कुछ अच्छा किया जाए, और इसके लिए तैयारी भी करनी पड़ती है। विद्यार्थियों को गतिविधि-आधारित तरीक़ों से पढ़ाना, उनके साथ खेल खेलना, शिक्षण सहायक सामग्री तैयार करना, पुस्तकालय में समय बिताना, आदि काम चलते रहते हैं।

इस साल मुझे कक्षा 5 में पढ़ाना था। हमेशा की तरह सत्र की शुरुआत में कुछ नए विद्यार्थियों का दाख़िला हुआ। ये विद्यार्थी दूसरे गाँव से थे, इसलिए अन्य विद्यार्थियों के साथ घुलने-मिलने में इन्हें समय लग रहा था। पुराने विद्यार्थियों की तरफ़ से भी इन नए विद्यार्थियों को कक्षा में शामिल करने के ख़ास प्रयास नहीं दिख रहे थे। विद्यार्थियों की हिचकिचाहट देखते हुए लगा कि मुझे ही कुछ प्रयास करने होंगे। मैं विद्यार्थियों के साथ नियमित रूप से गतिविधियाँ करती रहती हूँ। अकसर उनके साथ दैनिक जीवन से जुड़ी चर्चाएँ भी होती हैं, और इन चर्चाओं, कामों को बालसभा तक ले जाने का प्रयास भी करती हूँ।

मैंने सोचा, क्यों न कुछ नए विषयों पर बातचीत की जाए ताकि विद्यार्थियों को एक दूसरे को सुनने, समझने का मौक़ा मिल पाए। बातचीत के लिए कुछ विषय मैंने चुने और कुछ विद्यार्थियों से बात करके तय किए। चुने गए विषय थे– बस या रेल की पहली यात्रा, परिवार में किसी की काम करने में मदद, दोस्त से झगड़ा होने के बाद जब सॉरी बोला, विद्यालय का यादगार दिन, जब आप बहुत ख़ुश हुए, आपकी कक्षा के लिए अच्छे नियम, मेरी दिनचर्या, मेरा सपना, गाँव की विशेषता, आदि। सभी विषय विद्यार्थियों को मज़ेदार लगे।

इस गतिविधि को करने की प्रक्रिया कुछ ऐसी थी। पहले विद्यार्थियों को दो-दो की जोड़ी में दिए गए विषय पर एक दूसरे से बातचीत करनी थी, उसे लिखना था, और फिर लिखी हुई बातचीत को बड़े समूह में ज़ोर से बोलते हुए पढ़ना था। विषयों पर हुई चर्चा और लेखन, दोनों में उनकी रुचि दिखी। कक्षा में सहजता का माहौल बना। उन्होंने एक दूसरे को सुना, सराहना की, और नए-पुराने विद्यार्थियों को एक दूसरे से बात करने के मौक़े मिले। नतीजतन, विद्यार्थियों में नई दोस्ती की शुरुआत हुई।

इस प्रक्रिया की शुरुआत में कुछ मुश्किलें आईं। विद्यार्थियों ने पूछा, "क्या बताएँ, कैसे लिखें?" तब मैंने ख़ुद से शुरुआत की। उन्हें दिए गए विषयों से सम्बन्धित कुछ उदाहरण दिए। जैसे–

चित्र 1: बातचीत, लिखना सीखने का सशक्त आधार है

मैंने कब किसकी मदद की, मेरी पहली यात्रा, आदि। इससे विद्यार्थियों में सहजता बनी, और उनमें अपनी-अपनी बातें सुनाने की होड़ लग गई।

सिमरन ने 'मैंने घर के कामों में किस-किस की मदद की' विषय चुना। उसने लिखा, "मैंने घर के कामों में मम्मी, भाई, बहन और दादाजी की मदद की। बहन के साथ रोटी बनवाई, दादाजी की पानी भरने, और पापा की पुताई के काम में मदद की। एक दिन जब पापा भाई को पढ़ा रहे थे, उनका फ़ोन बजा। फ़ोन करने वाले कह रहे थे कि काम करने आ जाओ। मैंने पापा को कहा, 'आप चले जाओ, भाई को मैं पढ़ा लूँगा!' मेरी मम्मी को बुख़ार था। उनसे काम नहीं बन रहा था। मैंने उनसे कहा कि आप आराम करो, रोटी मैं बना लूँगा।" यह पहला मौक़ा था जब कोई लड़का घर के कामों में मदद के बारे में बता रहा था। शुरू में यह सुनकर कुछ विद्यार्थियों को अजीब लग रहा था, पर सिमरन की बातों को सुनकर बाक़ी लड़के भी उनके द्वारा घर पर किए काम पर बोलने की इच्छा जताने लगे।

सुनन्दा ने अपनी पहली रेल यात्रा का मज़ेदार वाक़िया लिखा। राजवीर ने दोस्त से हुए झगड़े की घटना सुनाई, और यह सिलसिला चलता रहा। पूरी प्रक्रिया में कोशिश रही कि विद्यार्थियों को जिस भाषा में बात करने में सहजता हो, वह उसी भाषा में अपनी बात रखें। चाहे वह उनके घर की भाषा हो या विद्यालय की। अब विद्यार्थियों को किसी विषय पर बोलना और लिखना कक्षा का अहम हिस्सा लगने लगा है। वे रोज़ाना पूछते हैं, "मैडम, आज किस विषय पर बात करेंगे?" एक दिन मैंने अन्धविश्वास से जुड़ा एक क़िस्सा उन्हें सुनाया। वे भी अपने अनोखे, मनोरंजक क़िस्से सुनाने लगे, और इस तरह इस विषय पर खुलकर बात हो पाई। इसमें बिल्ली के रास्ता काटने, छींकने और भूत प्रेत जैसी बातें आईं। सभी विषयों पर हमने तर्कपूर्ण बातें कीं।

एक बार कक्षा में दो विद्यार्थियों का झगड़ा हो गया। झगड़े में एक विद्यार्थी ने दूसरे को ग़ुस्से में उसकी जाति के नाम से ग़लत बात कह दी। उस वक़्त मैंने इस बारे में कोई प्रतिक्रिया नहीं दी। लेकिन विद्यालय में सुबह की प्रार्थना में कराया जाने वाला गीत 'हम सब भारतीय हैं' इस बात को समझाने का उपयुक्त माध्यम लगा, और यह प्रत्येक विद्यार्थी को याद भी है। मैंने विद्यार्थियों को काम दिया कि 'हम सब भारतीय हैं' गीत से वे क्या समझते हैं, उस पर अपनी बात लिखें। विद्यार्थियों ने बराबरी, साथ, एकता जैसी अच्छी-अच्छी बातें लिखीं और बताईं भी। इससे मुझे जाति के मुद्दे पर बात करने में आसानी हुई, और मैं झगड़े की बात को अन्य बातों से जोड़ते हुए एक बेहतर चर्चा पर ले जा पाई। मुझे इस बात की ख़ुशी है कि विद्यार्थी बातचीत से जुड़े इस काम को करने में कई बार परिवार के सदस्यों की मदद लेते हैं, और कक्षा में किसी विद्यार्थी के कम बोलने की स्थिति में उसे आगे लाने में मदद करते हैं।

बातचीत करने, उसे लेखन की तरफ़ ले जाने की प्रक्रिया मुझे अच्छी लग रही है। इससे उन विद्यार्थियों को भी बोलने का मौक़ा मिल पा रहा है जो अधिकांश समय चुप बैठते हैं, और पढ़ने में अपने साथियों की तुलना में थोड़े पीछे हैं। विद्यार्थियों में आत्मविश्वास, अभिव्यक्ति की क्षमता का विकास हो रहा है, और वे सुनने-बोलने, विचार करने के साथ ही पढ़ने-लिखने के कौशल की तरफ़ भी बढ़ रहे हैं।

विनीता चौकसे, शिक्षिका, शासकीय हाई स्कूल इमलिया नरेन्द्र, बैरसिया, भोपाल, मध्य प्रदेश

पाठों को चित्र कथा / कॉमिक्स में बदलकर लिखना सिखाया

निवेदिता नेगी

बात दो साल पुरानी है। मैं अपने विद्यालय में चौथी-पाँचवीं कक्षा के विद्यार्थियों को पढ़ाती थी, और उन्हें भाषा से जुड़ी विभिन्न गतिविधियाँ करवाती थी। उनमें किताबों और पढ़ने के प्रति उत्साह बढ़ाने के लिए विद्यालय में उपलब्ध बाल पुस्तकों की सहायता लेती थी। इसके बावजूद उनमें पढ़ने के प्रति कोई रुचि नहीं बन रही थी। मैं चाहती थी कि वे किताबें पढ़ने में रुचि लें, रचनात्मक ढंग से लिखना सीखें, लेकिन कोई रास्ता नहीं सूझ रहा था।

फिर एक दिन अपने बचपन के उन दिनों की याद आई जब मुझे कॉमिक्स और चित्र कथाएँ पढ़ने पर डाँट पड़ती थी। इस याद से अचानक एक राह खुलती नज़र आने लगी। लगा क्यों न विद्यार्थियों को भी पढ़ने के लिए कॉमिक्स व चित्र कथाएँ दी जाएँ। शायद इससे पढ़ने में इनकी रुचि बनने लगे। घर में रखी हुई कुछ अच्छी कॉमिक्स और चित्र कथाएँ तलाशीं जिनके चित्र और विषयवस्तु सुरुचिपूर्ण और विद्यार्थियों के सन्दर्भ की थी। कुछ इधर-उधर से जुगाड़ीं। इनमें निकोलाई रादलोव की रूसी किताब *सचित्र कहानियाँ,* शिर्ले ह्यूज़ की *ऊँची उड़ान, विक्रम बेताल,* आबिद सुरती की *ढब्बू जी, एक था मोहन* कॉमिक्स / चुनी हुई अमर चित्र कथाएँ आदि थीं। कुछ कॉमिक्स / चित्र कथाएँ रीडिंग कॉर्नर में बाहर की तरफ़ रख दीं, और कुछ अपनी टेबल पर रहने दीं। विद्यार्थियों से कुछ नहीं कहा।

कुछ दिन बाद पाया कि यह आइडिया काम करने लगा था। विद्यार्थी कॉमिक्स उलटने-पलटने लगे। मैं ख़ुश हुई। लेकिन मेरी इच्छा थी कि जो विद्यार्थी पढ़ने से बच रहे थे वो भी इन्हें उठाएँ। धीरे-धीरे वे भी कॉमिक्स और चित्र कथाओं की ओर आकर्षित हुए, और उठाने लगे। कुछ जो पढ़ने में अटकते थे, पढ़ने के दौरान मुझसे और अपने साथियों से मदद ले लेते थे। विद्यार्थियों की मदद करते हुए पाया कि उन्हें, कहानी में आगे क्या हुआ, यह जानने की प्रबल इच्छा होती थी। इस बात पर भी ध्यान गया कि कहानियों में आने वाले संवाद बोलने में उन्हें काफ़ी मज़ा आता था। धीरे-धीरे उनके खेल में कॉमिक्स / चित्र कथाओं के संवाद शामिल होने लगे थे जिन्हें सुनकर बड़ा मज़ा आता था।

इन्हीं सब बातों ने मुझे प्रेरित किया कि विद्यार्थियों के साथ कॉमिक्स बनाने का काम किया जाए। इससे वे पढ़ने-लिखने और सोचने की दिशा में भी आगे बढ़ेंगे। इसकी तैयारी के लिए सबसे पहले विद्यार्थियों से बात की। मसलन, उनकी पसन्दीदा कॉमिक्स कौन-सी है; कौन-सा संवाद मज़ेदार लगता है; कौन-सा पात्र अच्छा लगता है; उस पात्र की क्या विशेषताएँ हैं; आदि। विद्यार्थियों ने बताया, "चाचा चौधरी का दिमाग़ कम्प्यूटर से भी तेज़ चलता है", "पिंकी बहुत शैतान है, दादाजी को परेशान करती है", आदि। मैंने पाँचवीं की पाठ्यपुस्तक *रिमझिम* में रामबाबू की लिखी कहानी 'गोलू' और प्रसिद्ध लेखक आबिद सुरती की कॉमिक स्ट्रिप *ढब्बू जी* भी उनके साथ मिलकर पढ़ी। इसमें उन्हें काफ़ी मज़ा आया। वे संवादों और उनकी प्रस्तुति को कुछ-कुछ समझने लगे थे, अतः विद्यार्थियों को कक्षा या विद्यालय में घटी किसी घटना को संवाद के रूप में बोलने को प्रेरित किया। वे आपस में भी संवाद बनाने और बोलने लगे। उनकी रुचि और आत्मविश्वास देखते हुए अगले चरण में उन्हें पाठ्यपुस्तक से लोककथा 'राख की रस्सी', 'जैसा सवाल वैसा जवाब', 'सुनीता की पहिया कुर्सी', आदि पाठ पढ़ने का कार्य दिया गया। यह सभी पाठ इसलिए चुने क्योंकि इनमें संवाद थे।

मेरा मानना था कि इनको पढ़ने से उनको संवाद की संरचना, और इस तरह संवाद कैसे बनाते हैं, यह समझने में मदद मिलेगी। इन पाठों और कॉमिक्स के सन्दर्भ को लेते हुए, संवाद कैसे बनते हैं, किस संवाद के साथ कैसा चित्र बनना चाहिए, आदि पर विद्यार्थियों से बातचीत की। चूँकि अधिकांश पाठ ऐसे चुने गए थे जिनमें पहले से संवाद थे, अतः वे समझ पाए कि संवाद कैसे बनाएँगे। सबसे बड़ा काम था–सभी को इस प्रक्रिया में शामिल करना। इसके लिए विद्यार्थियों के समूह ऐसे बनाए थे जिनमें कुछ का लेखन अच्छा था तो कुछ की ड्राइंग। उन्होंने आपस में बातचीत करते हुए संवाद बनाए, ज़रूरत पड़ने पर मेरी मदद ली। विद्यार्थियों के बनाए चित्रों में उनकी रचनात्मकता की सुगन्ध थी।

इतनी बातचीत और तैयारी के बाद भी ऐसा नहीं था कि विद्यार्थियों ने एकदम से संवाद लिखने शुरू कर दिए। तैयारी के रूप में पहले कहानी को संवादों में लिखना होता था। यद्यपि उन्होंने बड़े उत्साह से संवाद लिखने का प्रयास किया, लेकिन वे उन्हें किताब से जस के तस व पूरे-पूरे उतार रहे थे। माने, वे संवाद की जगह अनुच्छेद ही लिख देते थे, और चित्र न बनने पर निराश हो जाते थे। यह भी देखने को मिला कि जो विद्यार्थी चित्र नहीं बना पाते थे वो पुरानी किताबों से चित्र काटकर चिपका देते थे। ब्लैकबोर्ड पर कुछ संवाद लिखकर विद्यार्थियों से चर्चा की और उन्हें भाषा की दृष्टि से बेहतर बनाया। ऐसा बार-बार किया। धीरे-धीरे कुछ विद्यार्थी संवाद की प्रस्तुति को समझने लगे। आगे इस प्रक्रिया में वे लाइब्रेरी की कोई किताब चुन लेते थे, और उसे संवाद में ढालकर कॉमिक्स / चित्र कथा बनाते थे। वे अपने संवाद और चित्र कक्षा में निर्धारित जगह पर

लगाते, ख़ुद पढ़ते, और दोस्तों को भी पढ़वाते। धीरे-धीरे सभी विद्यार्थी इस प्रक्रिया में शामिल हुए। वे ख़ुद की कहानी चुनकर अपनी कॉमिक्स बनाने लगे, और आनन्द लेने लगे।

इस प्रक्रिया में जुड़ने के बाद विद्यार्थियों को पाठ्यपुस्तक के पाठ ज़्यादा रुचिकर लगने लगे। उन्हें यह इतना मज़ेदार लग रहा था कि उनकी विद्यालय आने की नियमितता बढ़ने लगी। वे घर पर भी कहानी को कॉमिक्स या चित्र कथा बनाने में व्यस्त रहने लगे। उनके इस जुड़ाव को जब सीखने के प्रतिफल के बरक्स देखा, समझ आया कि उनका समझकर पढ़ना, लिखना, रचनात्मक और कल्पनाशील होना ख़ूब बढ़ा है।

निवेदिता नेगी, राजकीय प्राथमिक विद्यालय ननूर खेड़ा, देहरादून, उत्तराखण्ड

आख़िर कमी कहाँ रही!

राजेश प्रसाद

कक्षा आठ की विज्ञान में एक पाठ है, 'धातु एवं अधातु'। मुझे इस पाठ को पढ़ाने में लगभग 10 दिन लगे। बीच-बीच में विद्यार्थियों से प्रश्न भी पूछे थे। वे सामूहिक और व्यक्तिगत रूप से प्रश्नों के उत्तर देते जो प्रायः ठीक होते थे। उन्हें गृहकार्य भी दिया जाता था। अप्रैल और मई महीने में विद्यालय में नामांकन चल रहा था, नए विद्यार्थी शामिल हो रहे थे, इसीलिए पाठ को धीरे-धीरे और कई बार दोहराया जा रहा था।

एक दिन धातु के भौतिक गुणों को दर्शाने वाले चार प्रयोग किए। मसलन, सबसे पहले एल्युमिनियम का एक तार लेकर हथौड़ी से चोट करते हुए चपटा किया। विद्यार्थियों से पूछा, "बताओ, इस प्रयोग से धातु के कौन-से गुण का पता चलता है?" उनका उत्तर था, "चमक"। कक्षा का कोई भी बच्चा प्रयोग का सही उत्तर नहीं दे पाया, जबकि पूर्व में उन्होंने लिखित और मौखिक रूप से धातु के सभी गुणों को अच्छे से बताया था।

प्रश्न यह था कि विद्यार्थियों ने 'आघातवर्धनीयता' के स्थान पर 'चमक' उत्तर क्यों दिया। वास्तव में उनका उत्तर सही भी था क्योंकि पहले तार कुछ मटमैला था, और पीटने पर उसमें चमक आ गई थी। लेकिन मैं सन्तुष्ट नहीं था। मैंने एक विद्यार्थी से पूछा, "तुम्हारे घर में धातु है?" उसने कहा, "नहीं"। पाँच-छह अन्य विद्यार्थियों से भी यही प्रश्न पूछा। सभी का उत्तर था, "मेरे घर में धातु नहीं है।" जबकि धातु के गुण के बारे में पूछने पर वे बता पा रहे थे। यह सोचने वाली बात थी कि आख़िर कमी कहाँ रह गई! क्या यह भाषाई समस्या थी? क्या पाठ्यपुस्तकों में लिखे भारी-भरकम शब्द उनको समझ नहीं आ रहे थे?

धातु-अधातु पर बात करते हुए विद्यार्थियों को यह बताया था कि कमरे के दरवाज़े, खिड़की के ग्रिल, काँटी यानी कील से लेकर नट-बोल्ट, डेस्क व बेंच के फ्रेम, घर के बर्तन, यहाँ तक कि कई तरह के पेन भी धातु से बनते हैं। लेकिन लग रहा था कि वे कुछ भी रिलेट नहीं कर पाए थे, और शब्दों के अर्थ न समझ पाने की वजह से पाठ की विषयवस्तु को दैनिक जीवन से जोड़ नहीं पा रहे थे। एक कारण यह भी हो सकता है कि ऐसी चीज़ों से, जिनको वे रोज़ देखते हैं, इस्तेमाल करते हैं, किताब में कही गई बातों के अन्तर्सम्बन्ध स्थापित करने में असफल हैं।

आगे बढ़ने से पहले देखते हैं कि पाठ्यपुस्तक में 'आघातवर्धनीयता' और 'चमक' पर क्या लिखा है–

"आघातवर्धनीयता की योग्यता–धातुएँ आघातवर्ध्य होती हैं, अर्थात् इन्हें ठोकने, पीटने पर बिना टूटे ये पतली चादरों या पात्रों में परिवर्तित हो जाती हैं। जैसे– सोना, चाँदी, ताँबा, आदि। चमक–सामान्यतः धातुओं में चमक होती है। इसे धातुई चमक कहते हैं।"

विद्यार्थी सामान्यतः पीटने का अर्थ मार-पीट से, चादर का अर्थ ओढ़ने वाले कपड़े से, ठोकना मतलब काँटी आदि ठोकना समझते हैं। मैंने महसूस किया था कि आघातवर्ध्य, आघातवर्धनीयता, परिवर्तित, धातुई जैसे शब्दों से वे थोड़े असहज थे। वास्तव में धातु, आघातवर्ध्य, ध्वन्यात्मकता, भंगुर जैसे शब्द जो पाठ में बार-बार आए थे, विद्यार्थियों के व्यवहार में इससे पहले कभी थे ही नहीं।

चित्र 1 : विज्ञान की अवधारणाओं को दैनिक जीवन से जोड़कर सिखाना बेहतर होता है

जब यह आभास हुआ, इस भाषाई अन्तर को पाटने के प्रयास किए। विद्यार्थियों से उनकी घर की भाषा में पूरी विषयवस्तु पर बातचीत की। धातु-अधातु पर बातचीत के लिए उन शब्दों का चयन किया जो वे व्यवहार में लाते हैं। उदाहरण के लिए, धातु शब्द समझने के लिए लोहा लक्कड़, स्टील, पीतल, सोना, चाँदी, आदि के बारे में बात की। बताया कि इन सभी को धातु (मेटल) कहा जाता है, जबकि प्लास्टिक, रबर, आदि धातु नहीं कहे जाएँगे। पाठ में आए अन्य शब्दों, जैसे पीटने के लिए 'कूचना', चादर के लिए 'चदरा', आदि पर भी बात हुई। सभी जानते हैं कि जब भी हम कोई शब्द सुनते हैं, हमारे मस्तिष्क में उसका एक बिम्ब बनता है। यदि शब्द सुनने के बाद कोई बिम्ब, कोई तस्वीर ही नहीं बने, हम उसे कभी आत्मसात् नहीं कर पाएँगे। शायद इसलिए कहा जाता है कि विज्ञान में भी विद्यार्थियों को समझकर पढ़ना सिखाना ज़रूरी है ताकि वे शब्दों को, परिभाषाओं को रटें नहीं, बल्कि अर्थ समझते हुए विज्ञान समझ पाएँ।

यह भी समझा कि इस विषय की कई अवधारणाएँ ऐसी हैं जिन्हें दैनिक जीवन से जोड़े बिना, उन्हें आत्मसात् करना लगभग असम्भव प्रतीत होता है।

इस अनुभव के बाद कक्षा 8 के ही दूसरे वर्ग में इस प्रकरण को पढ़ाया। सारी बातचीत विद्यार्थियों की भाषा को ध्यान में रखते हुए की। आघातवर्धनीयता को ठोकने, पीटने से धातु में होने वाले बदलाव और उनकी बोली में 'कूचने' से आकार व आकृति में बदलाव होना बताया। यह भी कि यह बदलाव या तो लम्बाई में हो सकता है, या चौड़ाई में, या दोनों में हो सकता है। साथ ही, सभी अपने घर से कोई भी एक धातु या उसका टुकड़ा लेकर आएँगे। फिर कूचने का प्रयोग भी किया। परिणाम सुखद रहा। इस बार उन्होंने बिना किसी हिचकिचाहट एक स्वर में उत्तर दिया, "आघातवर्धनीयता"। विज्ञान की किताब में संपरीक्षित्र, विद्युत, धारा, परिपथ जैसे और भी कई शब्द हैं। अब उन सबको मिलकर समझने के प्रयास जारी हैं।

राजेश प्रसाद, सहायक शिक्षक, राजकीयकृत कन्या मध्य विद्यालय भरनो, गुमला, झारखण्ड

प्रिंट-रिच कक्षा

सीमा अरोड़ा

प्रिंट-रिच कक्षा, यानी ऐसी कक्षा जहाँ भाषा समृद्ध वातावरण तैयार किया जाता है। यह वातावरण विद्यार्थियों में पढ़ने-लिखने की समझ सहज रूप से विकसित करने में मददगार होता है। इससे विद्यार्थियों में नियमित रूप से पढ़ने-लिखने की आदत भी बनती है।

मैंने कक्षा 1 में 'फलों के नाम' पढ़ाना तय किया। विद्यार्थियों को बहुत-से फलों के नाम पता होते हैं, लेकिन उनके लिखित रूप पर उनका ध्यान जाए इसके लिए दीवारों पर रंग-बिरंगे चार्ट लगाए गए। इन चार्टों में आम, केला, सेब, तरबूज़ जैसे विभिन्न फलों के चित्र थे। प्रत्येक फल के नीचे उसका शुरुआती वर्ण, फिर पूरा नाम (अ-आम, क-केला, आदि) लिखा हुआ था। कक्षा की गतिविधियों में विद्यार्थियों ने ख़ुद फलों के चित्र बनाए, और नाम लिखे। ये चित्र कक्षा में प्रदर्शित किए गए।

इस गतिविधि के कुछ दिनों बाद फलों से जुड़े शब्दों की एक 'शब्द दीवार' बनाई। जैसे– मीठा, रसदार, पीला, खट्टा, बीज, हरा, गोल, आदि। विद्यार्थियों से और शब्द जोड़ने को कहा गया। वे जो शब्द बताते, उन्हें शब्द दीवार में जोड़ देती।

एक और गतिविधि में विद्यार्थियों को "आम मुझे पसन्द है क्योंकि..." यह वाक्य दिया गया। उन्हें मौखिक रूप से इस वाक्य को पूरा करना था। कुछ ने कोशिश की, और वाक्य को पूरा किया। उनके द्वारा बताए गए सभी वाक्यों को भी शब्द दीवार पर लिखा।

पढ़ने, लिखने व समझने की प्रक्रिया का एक अन्य रूप मेरे द्वारा सुनाई गई कहानी के दौरान दिखा। इस कहानी का शीर्षक था– 'आम का पेड़'। मैंने शब्द दीवार के ही कुछ शब्दों व छोटे-छोटे वाक्यों से कहानी शुरू की। विद्यार्थी शब्दों और वाक्यों को दीवार पर देख रहे थे। कहानी ख़त्म होने पर उन्होंने कहानी से कुछ नए शब्द चुने, और शब्द दीवार पर मेरी मदद से जोड़ा। फिर उन्हें कहानी के अन्त का चित्र बनाकर दिखाना था, सभी विद्यार्थियों ने यह काम किया।

एक कोना पढ़ने के लिए भी बनाया गया, जहाँ फलों से जुड़ी और अन्य किताबें रखी थीं। इसी तरह लिखने के लिए बनाए गए कोने में विद्यार्थी चित्र बना सकते थे, वाक्य, छोटी कहानियाँ या अनुभव लिख सकते थे। इन गतिविधियों के दौरान विद्यार्थी कक्षा में भाषा के अलग-अलग घटकों; शब्दों, वाक्यों, वर्णों से घिरे रहे, और भाषा से उनका सम्पर्क बढ़ा।

हालाँकि पहली कक्षा के विद्यार्थी लेखन में ज़्यादा प्रवीण नहीं होते हैं, पर मैंने पाया कि ऐसी गतिविधियाँ करने से उनमें

पढ़ने-लिखने का ज़बरदस्त रुझान पैदा होता है। कहा जाता है दृश्य सामग्री विद्यार्थियों की रुचि और समझ विकसित करने में मददगार होती है, और मैंने इसे होते देखा। ख़ुद के बनाए पोस्टर और चित्र देखकर विद्यार्थियों को गर्व होता है, और वे ज़्यादा सक्रिय रहने लगते हैं। नतीजतन, उनके अभिभावकों का जुड़ाव भी होने लगा। पहले नामांकन व ठहराव में परेशानी आती थी, लेकिन इन गतिविधियों से विद्यालय में नामांकन बढ़ा, और ख़ासकर छोटे विद्यार्थियों का ठहराव भी हुआ।

भाषा समृद्ध कक्षा के लिए यह भी ज़रूरी है कि समय-समय पर नए शब्दों के चार्ट, नई शब्द दीवार बनती रहे। कक्षा 3 और 4 के लिए शैक्षिक सत्र के शुरुआती दौर में नए शब्दों की सूची, उन शब्दों के चित्र लगाए। दो महीने बाद कुछ सरल मुहावरे व कहावतें, चित्रों के साथ लिखीं, और कक्षा में लगाया। विद्यार्थियों की पसन्दीदा और स्वयं रचित कविताओं के लिए कविता कोना बनाया। विद्यार्थियों के स्तर के अनुरूप हर दिन नया शब्द या वाक्य सीखने के लिए वाक्य कोना भी बनाया। इन गतिविधियों के लिए 15 दिन का समय तय किया। 15 दिन तक एक गतिविधि पर काम करने के बाद नई गतिविधि होती ताकि कक्षा में विभिन्न गतिविधियाँ करने का मौक़ा मिल पाए, और विद्यार्थियों को भी उन गतिविधियों को करने के अवसर मिल पाएँ।

विद्यार्थियों और मेरे लिए भी यह योजना फ़ायदेमन्द साबित हुई। वे रोज़ाना शब्द, वाक्य और चित्र देखकर पढ़ना सीख रहे थे। इससे उनकी भाषा और शब्द भण्डार मज़बूत होने लगा। चित्रों, रंगों और गतिविधियों से वे सीखने में रुचि लेने लगे थे, और इनमें सक्रिय रूप से सहभागिता करने लगे थे। यह भी पाया कि जब कक्षा में कोई शिक्षक नहीं होता, विद्यार्थी पोस्टर, चार्ट, कहानियों को ख़ुद पढ़ने की कोशिश कर रहे होते थे।

भाषा समृद्ध वातावरण से विद्यार्थियों को ख़ुद से सीखने में मदद मिलती है, और उनका आत्मविश्वास मज़बूत होता है। समूह में काम करते हुए उनमें सहयोग की भावना, और भावनाओं को व्यक्त करने की क्षमता विकसित होती है। शिक्षक को हर बात बोलने की ज़रूरत नहीं पड़ती, क्योंकि दृश्य सामग्री उनकी मदद करती है। शिक्षक को सोचने के लिए भी समय मिलता है। व्यवस्थित, रंगीन और रुचिकर वातावरण में विद्यार्थी अधिक अनुशासित रहते हैं, और ध्यान केन्द्रित करते हैं।

दीवार पर विद्यार्थियों की रची कविताएँ, कहानियाँ, चित्र, आदि लगाने से उनकी प्रगति दिखती है। यह अभिभावकों और पर्यवेक्षकों के लिए भी प्रभावशाली होता है। प्रिंट-रिच कक्षा जीवन्त, संवादात्मक और शिक्षण को रुचिकर बनाने वाला माहौल रचती है। इससे वे सिर्फ़ सीखते ही नहीं, बल्कि सीखने में आनन्द भी लेते हैं, और शिक्षक को भी नई-नई गतिविधियाँ बनाने और इन्हें विद्यार्थियों के साथ प्रयोग करने का अवसर मिलता है।

सीमा अरोड़ा, अध्यापक, राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय, अलवर, राजस्थान

स्थानीय भाषा का उपयोग आसान करता है सीखना

शशांक शेखर

मैं बिहार के कैमूर ज़िले के एक विद्यालय में हिन्दी का शिक्षक हूँ। इस क्षेत्र में ज़्यादातर भोजपुरी भाषा बोली जाती है। मैं भी इसी भाषाई क्षेत्र का रहने वाला हूँ। फिर भी मुझे बड़ी और छोटी कक्षाओं में विद्यार्थियों के साथ हिन्दी भाषा के कौशलों पर कार्य करने में कई दिक़्क़तों का सामना करना पड़ता था।

मुझे लगता था मैं अपनी बात विद्यार्थियों तक सही ढंग से नहीं पहुँचा पा रहा हूँ। मेरी खड़ी बोली 'हिन्दी' कई बार विद्यार्थियों के पल्ले नहीं पड़ती थी। उन्हें भाषा को लेकर बेगानापन-सा महसूस होता था। उनका सीखना प्रभावित हो रहा था। भाषा और भाषाई कौशल सिखाने में मेरी बहुत ऊर्जा लगती थी। बावजूद इसके मुझे वांछित परिणाम नहीं मिलते थे। अर्थात्, पढ़ाई गई कोई भी कविता, कहानी या पाठ उनकी समझ का हिस्सा नहीं बन पा रहा था। वे इन्हें न तो अपनी भाषा में न ही खड़ी बोली 'हिन्दी' या कहें मानक भाषा में व्यक्त कर पा रहे थे। उनकी अभिव्यक्त करने की क्षमता भी कमज़ोर हो रही थी, और धाराप्रवाह पढ़ना-लिखना भी कक्षा स्तर का नहीं हो पा रहा था।

इस मसले पर अन्य शिक्षकों से भी चर्चा करता रहता था। मैंने कई विधाएँ व तरीक़े प्रयोग में लिए। मसलन, कहानी-कविता की किताबों पर विद्यार्थियों के साथ तरह-तरह से काम किया, किताब में दिए गए प्रत्येक पाठ पर पाठ योजना बनाकर विस्तार से काम किया, सघन संवाद बनाए रखा, बाल साहित्य की भी मदद ली। इससे कुछ विद्यार्थियों के साथ तो इस तरह के काम सार्थक और सफल होते दिखे, पर ज़्यादातर से मन माफ़िक परिणाम नहीं मिल पाते थे। उनमें ध्यान से पढ़ने, पढ़कर अर्थ

निर्माण करने, स्वतंत्र लेखन एवं अपने विचारों को रचनात्मक रूप से लिख पाने जैसे भाषाई कौशलों के विकास का अकसर अभाव दिखता।

प्राथमिक कक्षाओं के शिक्षकों से बातचीत में एक ग़ौर करने लायक़ बात सामने आई। वह थी कि विद्यार्थियों के साथ संवाद में स्थानीय भाषा का इस्तेमाल करने और परिवेश से उदाहरण लेकर पाठों की व्याख्या करने से वे सीखने-सिखाने में आत्मविश्वास व उत्साह से जुड़ते हैं, और बेहतर सीखते हैं।

हालाँकि, मैं ख़ुद कविताएँ लिखने में स्थानीय या घर की भाषा के इस्तेमाल से परहेज़ नहीं करता हूँ, और उसके शब्दों, मुहावरों का खुलकर इस्तेमाल करता हूँ। लेकिन हिन्दी शिक्षक के रूप में भाषा पढ़ाते हुए जाने-अनजाने इसके प्रति कभी सचेत नहीं रहा। इसका नुक़सान विद्यार्थियों को और मुझे भी भुगतना पड़ा क्योंकि हमें अतिरिक्त प्रयासों के बावजूद अपेक्षित परिणाम नहीं मिले।

मैंने साथी शिक्षकों की कक्षाओं में कुछ दिन काम किया, उन्हें बारीक़ी से पढ़ाते हुए देखा, विद्यार्थियों के साथ समय बिताया, और भाषा पढ़ाने के तरीक़ों को समझने की कोशिश की। साथी शिक्षक क्षेत्र के सभी विद्यार्थियों से स्थानीय भाषा में बात करते थे। वे उनके माता-पिता से भी स्थानीय भाषा में बात करते थे। इससे विद्यार्थियों का शिक्षकों से अपनेपन का रिश्ता बन गया था। विद्यार्थी जो भाषा घर में सुनते-बोलते थे वही विद्यालय में भी सीखने-सिखाने के दौरान सुन-समझ पाते थे। इससे उनका समझना-सीखना आसान हुआ। स्थानीय भाषा के शब्दों व भाषा के प्रयोग से उन्होंने हिन्दी में भी रुचि लेना शुरू कर दिया।

मैंने शिक्षकों की सलाह व अवलोकनों के अनुसार काम करना प्रारम्भ किया। पहले मैं स्थानीय भाषा का बहुत कम इस्तेमाल करता था। अब स्थानीय भाषा का उपयोग करना शुरू किया। विद्यार्थियों से बीच-बीच में विभिन्न शब्दों पर चर्चा करने लगा, और पुस्तकालय की मदद से स्थानीय भाषा के विविध रूपों व लय के सम्पर्क में लाया। भाषा तो शब्दों से ही बनी है। शब्दों की समझ व उपयोग पर जितना ज़्यादा काम करेंगे, हमारी भाषा उतनी ही सुदृढ़ व प्रभावशाली होती जाएगी। कुछ दिनों बाद महसूस किया कि विद्यालय के जिन विद्यार्थियों के साथ मुझे दिक़्क़त आती थी, अब धीरे-धीरे रुचि लेने लगे हैं। एहसास हुआ कि बहुत अच्छा हो रहा है।

अब मैं प्राथमिक कक्षाओं के विद्यार्थियों को हिन्दी के साथ-साथ स्थानीय भाषा की कविता-कहानियाँ सुनाकर इन पर बातचीत कराने की कोशिशों में लगा हूँ। साथ ही, बड़ी कक्षाओं के विद्यार्थियों के साथ स्थानीय भाषा व परिवेश से जुड़े उद्धरणों, प्रसंगों पर चर्चा करते हुए भाषा के साहित्यिक स्वरूपों को समझा रहा हूँ। इन प्रयासों में स्थानीय भोजपुरी साहित्य से काफ़ी मदद मिली। हालाँकि, शुरुआत में यह सब कुछ काफ़ी चुनौतीपूर्ण रहा।

यह एक निरन्तर चलने वाली बहुआयामी प्रक्रिया है। इसमें विद्यार्थियों के साथ-साथ मेरा भी एक नया शब्दकोश व भाषा संसार आकार लेने लगा है, क्योंकि मैं स्थानीय भाषा के उपयोग के महत्त्व को जान चुका हूँ।

शशांक शेखर, शिक्षक, आदर्श उच्च विद्यालय बढ़पर, कैमूर, बिहार

शिक्षा में खेलों की अहमियत

खैरुन्निशा

राष्ट्रीय *शिक्षा नीति 2020* रेखांकित करती है कि हर विद्यार्थी में तरह-तरह की क्षमताएँ होती हैं, और हर विद्यार्थी को उसकी क्षमता के अनुरूप अवसर मिलने चाहिए। लेकिन ये अवसर केवल कक्षा में मिलेंगे, ऐसा नहीं है। विद्यालय में ऐसी कई जगहें होती हैं जहाँ विद्यार्थियों को अपनी क्षमताएँ निखारने के अलग-अलग तरह के अवसर मिलते हैं। ऐसी ही एक जगह है–खेल का मैदान।

खेल सभी विद्यार्थियों के लिए ज़रूरी होते हैं। लेकिन हर कक्षा में कुछ विद्यार्थी ऐसे होते हैं जो खेलों से दूरी बनाए रखते हैं। इसके कई कारण हो सकते हैं। मसलन, शारीरिक रूप से दुर्बल होना, संकोची या अधिक वज़न का होना, आदि। कुछ विद्यार्थी डर या हीन भावना से ग्रसित भी हो सकते हैं। यहीं से शुरू होती है एक शिक्षक की भूमिका। जब वह हर विद्यार्थी के डर को दूर करते हैं, और उन्हें आत्मविश्वास से भरते हैं।

मैंने अपने विद्यालय में खेलों को प्रतिस्पर्धा की दृष्टि से नहीं, बल्कि सामाजिक मेलजोल और मानसिक रूप से सशक्त बनाने के साधन के रूप में अपनाया। खेल के ज़रिए मैं कई विद्यार्थियों को उनके विद्यालय, कक्षा के साथ जोड़ सकी। यह कैसे सम्भव हुआ, इसके कुछ उदाहरण यहाँ प्रस्तुत हैं–

निमिष और रत्ना ने भरी आत्मविश्वास की उड़ान

कक्षा 5वीं में पढ़ने वाले निमिष और 7वीं की रत्ना का वज़न सामान्य से कुछ अधिक था। इसका असर उनकी आत्मछवि पर भी पड़ा था। वे अकसर खेलों से कतराते, और किसी-न-किसी बहाने ख़ुद को गतिविधियों से अलग रखते थे। शुरू-शुरू में यह लगता था कि वे आलसी हैं, फिर लगा कि उनकी खेलों में रुचि नहीं है। लेकिन समय गुज़रते महसूस हुआ कि समस्या असल में कुछ और है।

उनसे व्यक्तिगत बातचीत की। उनके मन को समझने की कोशिश की। यह जानने का प्रयास किया कि वो क्या वजहें हैं जिनके चलते ऐसे खेल जिनमें हर विद्यार्थी की रुचि होती है, ये उनमें रुचि नहीं लेते हैं, उनसे दूर भागते हैं। फिर समझ में आया कि शारीरिक डीलडौल के चलते वे एक क़िस्म के संकोच और हीनता के एहसास में हैं, और बाक़ी विद्यार्थियों द्वारा मज़ाक़ उड़ाए जाने से भी घबराते हैं।

चित्र 1 : खेल विद्यार्थियों की बहुत सारी क्षमताओं को निखारने का अवसर प्रदान करते हैं

अब बारी थी उन्हें उनके संकोच से बाहर निकालने की। इसके लिए खेलों को ही चुना। उन्हें छोटे-छोटे कार्यों के लिए प्रोत्साहित किया। मसलन, बाधा दौड़ में छोटी दूरी के लिए दौड़ना, गेंद पकड़ने जैसे हल्के खेलों में भाग लेना, साथियों के लिए टीम का नेतृत्व करना, आदि। उनका डर ख़त्म करने के लिए लेटकर जूडो की अलग-अलग पोज़ीशन जैसे- उशीरो उकेमी, योको उकेमी, माये उकेमी में गिरने / लुढ़कने का अभ्यास कराया। खेल गतिविधियों में कुछ बदलाव करके सरल बनाया ताकि ये दोनों विद्यार्थी आसानी से कर पाएँ।

धीरे-धीरे खेलों के प्रति स्वीकार्यता बनने लगी। निमिष और रत्ना में भी, और बाक़ी विद्यार्थियों में भी। अब ये दोनों खेलों में तो भाग लेते ही हैं, अपने आत्मविश्वास से अन्य विद्यार्थियों को भी प्रेरित करते हैं।

आर्यन ने छोटे क़दमों से हासिल किए बड़े सपने

कक्षा 1 में पढ़ने वाला आर्यन शुरू में न तो कूद पाता था, न दौड़ पाता, और न ही जूडो जैसी गतिविधियों में फ्रंट रोल कर पाता था। हर प्रयास में वह गिरता और रोने लगता। लेकिन मैंने उसके प्रयासों को कभी विफलता नहीं माना। उसे बताया कि गिरना भी खेल का हिस्सा है। उसके लिए भी गतिविधियों को छोटे-छोटे भागों में बाँटा। उदाहरण के लिए, एक दिन केवल ज़मीन पर लुढ़कने का अभ्यास, अगले दिन घुटनों पर चलना, फिर धीरे-धीरे खड़े होकर सन्तुलन बनाना, आदि। कुछ ही हफ़्तों में आर्यन आत्मविश्वास के साथ दौड़ने लगा, कूदने लगा, और उसने जूडो में अपनी ख़ास रुचि बना ली। यह इतना आसान तो नहीं था, पर उसके इस विकास ने मुझे, अन्य शिक्षकों और उसके माता-पिता को भी आश्चर्य वाले सन्तोष से भर दिया।

लिली और रिया ने की डर से दोस्ती

कक्षा 1 की लिली और रिया दोनों खेलों से डरती थीं। खेल मैदान उनके लिए तनाव और डर की जगह थी। वे किसी भी खेल में भाग लेने से मना कर देती थीं। उनके लिए कुछ शुरुआती गतिविधियाँ सोचीं। मसलन, रंगीन गेंदों को इकट्ठा करना, छोटी-छोटी कूद लगाना, लाइन पर चलना, अपने साथी की पीठ पर जाना और साथी को अपनी पीठ पर लेकर चलना, साथी के साथ रस्सी खींचना, आदि। उन्हें उनकी पसन्द की साथी टीम में शामिल किया। उनसे कहा कि अगर मन न हो तो वे केवल देख सकती हैं। धीरे-धीरे उनका डर कम हुआ। वो खेल देखते-देखते खेलने भी लगीं। दोस्त बनने लगे, संवाद होने लगे।

आयशा की आत्मनिर्भर यात्रा

एक और उदाहरण आयशा का है। शुरुआती दिनों में खड़े होते समय उसके पैर काँपते थे जिससे उसकी शारीरिक और मानसिक स्थिति का पता चलता था। लेकिन उसके आत्मविश्वास को मज़बूत करने के लिए उसके साथ भी विशेष रूप से काम किया। धीरे-धीरे आयशा ने अपने डर और संकोच को पार किया। अब वह बिना किसी सहारे के पेड़ पर चढ़कर 6 फ़ुट की ऊँचाई से कूद पाती है। यह न केवल उसकी शारीरिक क्षमता का परिचायक है, बल्कि उसकी मानसिक दृढ़ता और आत्मविश्वास का भी प्रतीक है। यह बदलाव उसकी मेहनत, शिक्षकों के समर्थन और विद्यालय में समावेशी व सहयोगी वातावरण के कारण सम्भव हुआ है।

अगर विद्यार्थियों की क्षमताओं को समझें, उपयुक्त अवसर प्रदान करें, वे अपनी शारीरिक सीमाओं को पार करने के साथ-साथ मानसिक रूप से भी मज़बूत बन सकते हैं। मेरा मानना है कि हर विद्यार्थी अपनी क्षमताओं से कहीं अधिक भी कर सकता है। बस ज़रूरत है सही मार्गदर्शन और सही अवसर की।

ख़ैरुन्निशा, शिक्षिका, अज़ीम प्रेमजी स्कूल, उत्तरकाशी, उत्तराखण्ड

विविध विद्यार्थियों के लिए विविध शिक्षण पद्धतियाँ

रीता कोटोकी

मैं असम के चाय बाग़ानों के पास स्थित एक प्राथमिक विद्यालय में शिक्षिका हूँ। विद्यार्थी मुख्यतः चाय बाग़ान समुदाय के हैं। पिछले कुछ सालों में देखा है कि नामांकन में काफ़ी वृद्धि हुई है। इसका एक प्रमुख कारण यह है कि सरकार विद्यार्थियों को भोजन, किताबें, स्कूल बैग, यूनिफ़ॉर्म, आदि प्रदान करती है। लेकिन असलियत थोड़ी अलग है। विद्यार्थी नामांकित तो हैं, लेकिन कक्षाओं में मौजूद नहीं हैं। एक शिक्षिका के रूप में यह सोचती रहती थी कि उनके विद्यालय न आने के क्या कारण हो सकते हैं। और जब मेरा ध्यान एक ऐसे विद्यार्थी पर गया जो शायद ही कभी विद्यालय आता था, मुझे इस प्रश्न का उत्तर मिला।

सात वर्षीय जादव तीसरी कक्षा में पढ़ता है। उसके माता-पिता चाय बाग़ानों में मज़दूर हैं। वह तीन सन्तानों में सबसे छोटा है। माता-पिता उसे विद्यालय में दाख़िला दिलाकर ख़ुश हैं, इसके अलावा उन्हें और किसी बात की कोई परवाह नहीं है। उन्हें उसकी उपस्थिति, होमवर्क या विद्यालयी शिक्षा से जुड़ी किसी भी चीज़ के बारे में कुछ भी पता नहीं है।

एक दिन जब वह विद्यालय आया, मैंने उसकी कक्षा में पर्यावरण विज्ञान पढ़ाने का फ़ैसला किया। विद्यार्थियों को एक गतिविधि दी। उनसे कहा कि सोचकर पानी के उन सभी स्रोतों की सूची बनाएँ जिनके बारे में वे जानते हैं। यह उस दिन का आख़िरी कालांश (period) था। जादव को छोड़कर बाक़ी सभी ने सूचियाँ बनाईं और साझा कीं। यह देखकर काफ़ी निराशा हुई कि वह लिखने की कोशिश तक नहीं कर रहा था। मैंने इसे एक चुनौती के रूप में लिया और कहा कि जब तक जादव अपनी सूची जमा नहीं कर देता, मैं घर नहीं जाऊँगी।

विद्यालय समय के बाद लगभग आधा घण्टा उसके साथ बैठी रही। सभी विद्यार्थी विद्यालय से जा चुके थे। मैंने उससे कुछ सरल-से प्रश्न पूछकर उसकी मदद करने की कोशिश की। कहा, "सोचो, तुम्हारे माता-पिता पानी कहाँ से लाते हैं? क्या तुम्हारी दादी ने कभी इस बारे में बात की कि वे अपने परिवार के लिए पानी कैसे लाती थीं?" पर कोई फ़ायदा नहीं हुआ। वह पूरे समय चुप रहा। उसने अपने शारीरिक हाव-भावों को भी ऐसे दबा रखा था कि कुछ पता नहीं लग पा रहा था। मैं हार मानना चाहती थी, लेकिन एक आख़िरी कोशिश करने की सोची। मैं स्टाफ़रूम से पानी की बोतल लेने के लिए उठी, और जब उस ओर जा रही थी, एक तेज़ आवाज़ सुनी। मुड़कर देखा तो जादव विद्यालय के फाटक की ओर दौड़ रहा था। उसने अपना स्कूल बैग और किताबें हवा में उछाल दीं, और भाग गया। मैं अपमानित और असहाय महसूस कर रही थी। वहाँ मौजूद सहकर्मियों ने सुझाव दिया कि सब मिलकर उसके सामाजिक-भावनात्मक विकास को सुनिश्चित करने के लिए कोई और तरीक़ा अपनाएँगे।

अगले कुछ दिनों वह विद्यालय नहीं आया। लेकिन मैं इस बात के लिए तैयार थी कि वह जब भी वापस आएगा, स्थिति से निपट लूँगी। कुछ हफ़्तों बाद वह विद्यालय आया। मैंने उसके कक्षा शिक्षक से कहा कि वे उससे उस घटना का ज़िक्र न करें। सभी शिक्षकों ने उसके साथ प्यार और संवेदना के साथ पेश आने का फ़ैसला किया। जब भी कक्षा में कोई गतिविधि करवाते उसे ज़्यादा समय देते, और अगर उसकी इच्छा न हो उसे बोलने के लिए मजबूर नहीं करते। हमने उसकी ओर ध्यान आकर्षित न करने की भी पूरी कोशिश की।

धीरे-धीरे देखा कि जादव कक्षा में पूछे गए प्रश्नों के उत्तर तो दे रहा था, लेकिन केवल कला के माध्यम से। जैसे ही कला में उसकी रुचि के बारे में पता चला, हमने सोचा उससे कहें कि वह प्रश्नों के उत्तर चित्रों के माध्यम से दे सकता है। उदाहरण के लिए, परिवहन के विभिन्न साधनों के बारे में सोचकर लिखने का काम दिया। विद्यार्थियों से कहा कि वे अपने उत्तर चित्र बनाकर भी दे सकते हैं। इस बात पर भी ज़ोर देना शुरू किया कि वे गतिविधियों में अपने अनुभव शामिल कर सकें, और पाठ्यपुस्तकों से आगे जा सकें। इसलिए परिवहन के साधनों पर एक प्रश्न के लिए उसने और दूसरे विद्यार्थियों ने इसके पारम्परिक तरीक़ों, जैसे भैंसागाड़ी, और आधुनिक तरीक़ों, जैसे ब्रह्मपुत्र नदी पर तैरती नावों का भी उल्लेख करना शुरू कर दिया। कार, बाइक, ट्रैक्टर और ट्रक के साथ-साथ ये कुछ ऐसे

चित्र 1 : शिक्षकों को सिखाने के दौरान दिलचस्प व प्रासंगिक रणनीति अपनानी ज़रूरी है

वाहन थे जिनसे वे परिचित थे, और जुड़े हुए थे। जैसे-जैसे शिक्षकों ने जादव में बदलाव देखना शुरू किया, सभी ने इस तरीक़े को अपनी अन्य कक्षाओं में भी लागू करना शुरू कर दिया।

इसके अद्भुत परिणाम मिले। सभी विद्यार्थियों को ये गतिविधियाँ बहुत पसन्द आईं, उन्होंने उनका ख़ूब आनन्द लिया। कुछ विद्यार्थी इतने रचनात्मक थे कि उन्होंने 'जीवन जीने के तरीक़े' वाले पाठ पर आधारित एक रोल-प्ले तैयार करने के बारे में भी सोचा। हम सभी ने इस अनुभव से—या यूँ कहें कि सफलता की इस कहानी से—यह महसूस किया कि जादव विद्यार्थी के रूप में एक ऐसा शिक्षक था जिसने हमें सिखाया कि हर विद्यार्थी अलग होता है। और हमें, शिक्षक होने के नाते, प्रत्येक विद्यार्थी के लिए सीखने को दिलचस्प, प्रासंगिक और सार्थक बनाने के लिए विभिन्न प्रकार की रणनीति अपनानी चाहिए।

रीता कोटोकी, शिक्षिका, मैकेपोर गार्डन एलपी विद्यालय नाज़िरा, शिवसागर, असम

अँग्रेज़ी से नलिनी रावल द्वारा अनुवादित।

पत्र लेखन के ज़रिए भाषा कौशल विकास

शिवादित्य

मैं अज़ीम प्रेमजी स्कूल, बाड़मेर में भाषा शिक्षक हूँ। हमारी विद्यालय संस्कृति में संवाद सबसे महत्त्वपूर्ण है। धीरे-धीरे यह संवाद पत्रों के माध्यम से होने लगा। पत्र लेखन का मुख्य उद्देश्य विद्यार्थियों के अन्दर लिखने को लेकर जो डर और झिझक होती है उसे कम करना, और अपने मन की बात को बेहतर ढंग से लिखकर अभिव्यक्त करना होता है।

कक्षा 6 से 8 में क्रमशः 34, 31 व 36 विद्यार्थी हैं। इनमें से 12 बुनियादी दक्षताओं से जूझ रहे थे। दक्षता स्तर 1 व 2 के विद्यार्थियों के साथ लेखन में कई चुनौतियाँ थीं। मसलन, उनके लेखन में ख़ूब सारी वर्तनी की अशुद्धियाँ होती थीं; किस विषय पर लिखना है और कितना लिखना है, यह समझ नहीं आता था; विराम चिह्नों का प्रयोग अकसर गड़बड़ हो जाता था; लेखन में शब्दों व अर्थों का दोहराव दिखता था; आदि।

लिखने की इन चुनौतियों का ध्यान रखते हुए 'पत्र लेखन' का सहारा लिया गया। पत्र लेखन पर काम करने की वजह थी इस विधा की आत्मीयता और निजी जुड़ाव। जहाँ कौन देखेगा, क्या कहेगा, ग़लती हुई तो क्या होगा जैसे डर नहीं होते, बस अपने मन की बात को किसी अपने तक लिखकर भेजना होता है। इससे विद्यार्थियों के मन में लिखने को लेकर जो डर या झिझक होती है वह कम होने लगती है।

मैंने अपनी कक्षा में इसकी शुरुआत अपनी बात को छोटी पर्ची में लिखकर कहने से की। हर दिन अपने मन की बात कहने के लिए मटके या बॉक्स में कुछ पर्चियाँ डालते थे। इनमें किसी के बारे में शिकायतें, किसी को धन्यवाद या प्रशंसा, आदि लिखकर साझा करते थे। पर्चियाँ शनिवार को पढ़ी जाती थीं। पत्र लेखन की समझ बनाने के लिए विद्यार्थियों को इसका प्रारूप भी दे दिया गया। धीरे-धीरे यही कहना-सुनना पत्रों में बदल गया। मटके की जगह लेटर बॉक्स ने, और पर्चियों की जगह बड़े पत्रों ने ले ली।

विद्यार्थियों के लिए यह मज़ेदार गतिविधि थी, और बतौर शिक्षक मेरे लिए उस खिड़की का खुलना जहाँ वे संकोच से निकलकर अपनी बात लिख रहे थे। उनके लिखे में होने वाली अशुद्धियाँ मेरी शिक्षण योजना की राह प्रशस्त कर रही थीं। उनके पत्रों में जो कमियाँ दिखाई दीं, उन पर कक्षा में काम बढ़ा दिया।

पत्र लेखन में विस्तार के लिए विद्यार्थियों को मात्राओं, उनकी बातों व भाषा की बारीक़ियों में सुधार के लिए टोका नहीं गया। इससे उन्हें लिखने का प्रोत्साहन मिला।

यहाँ कुछ विद्यार्थियों के उदाहरण हैं जिनसे यह प्रक्रिया बेहतर समझ आएगी—

सुप्रिया अभी कक्षा 8 में है। वह कक्षा स्तर पर है। उसके शुरुआती लेखन में वाक्य लम्बे और जटिल थे। उनमें स्पष्टता की कमी थी। जैसे—

> *"सर मेरी मम्मी सई कहती है। की तुम हर मेसा पढ़ाई मे घर आकर पाठ पढ़ते हो और नहीं पढ़ा तो हरमेसा नहीं पढोगे''*
>
> *"सर आज हमने खाया और मे जब कक्षा में आई ता मेने देखा की एकता कक्षा मे बेढे थे।"*

उसके लेखन में 'और', 'तो', आदि योजक शब्दों का बार-बार प्रयोग था। विचार सही वाक्यों के साँचे में नहीं थे। वर्तनी सम्बन्धी त्रुटियाँ थीं। विराम चिह्नों का कहीं अभाव और कहीं ग़लत प्रयोग था। शब्दों का दोहराव भी आम समस्या थी।

सुधार के लिए सुप्रिया के साथ उसके लिखे पत्र को पढ़ा। इससे उसे अपनी ग़लतियाँ और वाक्यों को समझने में मदद मिली। कक्षा की 'शब्द दीवार' पर लगे शब्दों से पत्रों व लेखन में शब्दों को ठीक किया गया। जैसे– ध्वनि, बैठना, ऊँचा, ऐसी, ननिहाल, पहुँच, बाहर, कर रहा है / था (कर रा था), मुश्किल, आदि। नए शब्दों के प्रयोग के लिए प्रोत्साहित किया। पत्र की शुरुआत और अन्त कैसे करना है, पर विस्तृत बात की गई।

सुधार के बाद अब सुप्रिया के पत्रों में औपचारिक अभिवादन, यानी शुरुआत और अन्त दिखाई देता है। वाक्य छोटे, संरचित और स्पष्ट हैं। उन्हें पढ़कर विचार समझ आते हैं। पत्रों में विषय स्पष्ट है। वह लेखन के बारे में अधिक सचेत हुई है। वर्तनी की अशुद्धियाँ भी कुछ कम हुई हैं। जैसे–

> *"सर मैंने आपको यह पत्र इसलिए लिखा है क्योंकि मुझे समझ नहीं आ रहा है कि मैं हर रोज पत्र किस टोपिक पर लिखूँ। तो आप जब इस पत्र का जवाब दोगे तब आप बता देना कि मुझे किस टोपिक पर ज़्यादा पत्र लिखनी है।"*

इसके बाद उसने कुछ टॉपिक के नाम भी लिखे।

सुप्रिया अब लिखना सीखने की प्रक्रिया में दूसरों की सक्रिय भागीदारी ले रही है। वह ख़ुद सुझाव माँगती है, "सर, बताइए और बेहतर कैसे करूँ?''

मुनमुन कक्षा 8 में है, और कक्षा स्तर अनुसार लेखन-पठन कर पाती है। लेखन में भावनाओं का प्रदर्शन करती है। उसके शुरुआती लेखन में वाक्यों का दोहराव मिलता था, वाक्यों में स्पष्टता की कमी से विचारों का समझना मुश्किल था। विचारों में प्रवाह न होने से एक ही बात को कई वाक्यों में दोहराती थी। जैसे–

> *"मैं अब ज्यदा गुस्सा नहीं करती पर कभी कभी गुस्सा आता है, जब अति हो जाती है किसी चीज कि तो गुस्सा आता है जैसे शौर।"*

ज्यदा (ज़्यादा), कशिश (कोशिश), वजय (वजह), ध्यना (ध्यान), शौर (शोर), आदि जैसी वर्तनीगत अशुद्धियाँ थीं। विराम चिह्नों का अभाव था। इससे पता नहीं चलता था कि कब वाक्य समाप्त हो रहा है, और कहाँ रुकना है।

इन पर सुधार के लिए मुनमुन के साथ उसके लेखन को पढ़ा। साथ ही, लिखने से पूर्व थोड़ा सोचकर लिखने पर चर्चा हुई। पैराग्राफ़ बनाकर लिखने का अभ्यास किया गया। पढ़कर दोहराव वाले वाक्य और शब्दों को अलग किया गया। विराम चिह्नों को समझने के लिए लेखन पर पंक्ति-दर-पंक्ति काम किया गया। इससे मुनमुन को समझ आया कि बात पूरी होने पर पूर्ण विराम का इस्तेमाल किया जाता है। इसे अन्य विद्यार्थियों के साथ करके देखा भी गया।

सुधार के बाद मुनमुन का लेखन छोटे वाक्यों में, अधिक स्पष्ट और संरचित है। जैसे–

> *"यह बुक आपने कहीं न कहीं जरूर पढ़ी होगी। जिसमें एक लड़का होता है, उसका नाम मोगली होता है।"*

वह अपने अनुभवों, भावनाओं को बेहतर ढंग से व्यक्त करती है। मिसाल के तौर पर,

> *"मेरा भी जंगल में रहने का मन करता है।"*

> *"इस बुक के कई पार्ट हैं, जब मैं उन्हें पढ़ती हूँ तो मुझे बहुत अच्छा लगता है।"*

समीना भी कक्षा 8 में है। वह मौखिक रूप से विचारों को व्यक्त करने, तर्क-वितर्क करने, और चर्चा में भाग लेने में सक्रिय है। शुरुआत में समीना के लेखन में वाक्य संरचना और वर्तनी की त्रुटियाँ थीं।

> *"मैं क्या आपको मेरा बिहेवियर अच्छा लगता है।"* या *"आप अच्छा पढ़ा हो"* (आप अच्छा पढ़ाते हो।), जैसे वाक्य जिनमें क्रियाओं और कारकों पर ध्यान नहीं दिया गया था।

> *"मरी पढ़ी अच्छी चाल रही है।"*

इससे वाक्यों का अर्थ समझने में कठिनाई आती थी।

लेखन में सुधार के लिए उसके लिखे हुए को बार-बार पढ़ा। लेकिन वह अकसर वही पढ़ती जो उसने लिखने के लिए सोचा था, अर्थात् अनुमान-आधारित पढ़ना। फिर मैंने उसके लिखे को वैसा ही पढ़ा जैसा उसने लिखा था, तब उसका ध्यान अपनी ग़लतियों की ओर गया। उसे त्रुटिपूर्ण शब्दों को पाठ्यपुस्तक में और 'शब्द दीवार' पर दिखाया। 'इ', 'ई', 'आ' जैसी मात्राओं की ग़लतियों को बार-बार समझाया। वाक्यों में सही क्रम बनाने, क्रिया व कारक चिह्न का सही प्रयोग करने पर ज़ोर दिया। लेखन में उसकी रुचि का उपयोग लगातार लेखन और अभ्यास के लिए किया गया।

इन प्रयासों से समीना के लेखन में वर्तनी और मात्राओं का सही उपयोग होने लगा। वह अब विचारों को क्रमबद्ध और विस्तार से प्रस्तुत कर पाती है।

इन प्रयासों से कक्षा 6 से 8 के लगभग सभी विद्यार्थी विस्तार से लेखन करने लगे हैं। बुनियादी साक्षरता से जूझ रहे विद्यार्थियों को छोड़कर शेष विद्यार्थी 7-8 पंक्तियों के पैराग्राफ़ में अपनी बात कहने लगे हैं। अब वे अपने मित्रों और शिक्षकों को किसी समस्या के बारे में, किसी मेहमान के विद्यालय में आने पर, पुस्तक समीक्षा, अपने मन की बात, दोस्तों से क्षमा माँगने जैसे विषयों पर पत्र लेखन करते हैं।

इस पूरी प्रक्रिया से मुझे यह बात समझ आई कि यदि विद्यार्थियों की मौखिक भाषा अभिव्यक्ति में विस्तार नहीं है तो वह लेखन में नहीं आ पाएगा। इसलिए पत्रों व उनके मन की बातों को विस्तार से सुनना, और सवालों के ज़रिए उनके विचारों को विकसित करना महत्त्वपूर्ण है। उनके लिखे को बोलकर पढ़ना, और ख़ुद अपनी ग़लतियों को पहचानने के अवसर देना प्रभावी सिद्ध हुआ।

समीना के उदाहरण से समझ बनी कि कुछ विद्यार्थी वह पढ़ते हैं जो वे सोचते हैं, न कि वह जो लिखते हैं। इस पर शिक्षक का ध्यान जाना बहुत आवश्यक है।

साथ ही, शुरुआती लेखन में यह बात महत्त्वपूर्ण है कि विद्यार्थियों को मात्राओं या भाषा की बारीक़ियों के लिए बार-बार टोकने के बजाय अधिक-से-अधिक लिखने के लिए प्रोत्साहित करना फ़ायदेमन्द रहता है। निजी अनुभव को लेखन से जोड़ना, लिखने को लेकर झिझक को कम करता है।

शिवादित्य, शिक्षक, अज़ीम प्रेमजी स्कूल, बाड़मेर, राजस्थान

विद्यार्थियों के विकास में देरी सम्बन्धी समस्याएँ और समाधान

विद्याश्री एस एस

ग्रामीण समुदाय का एक बच्चा 5 वर्ष की आयु में पहली बार हमारे विद्यालय आया, और उसने यूकेजी में दाख़िला लिया। वह धाराप्रवाह उर्दू बोलता था। कन्नड़ समझ तो लेता था, लेकिन बोल नहीं सकता था। इस विद्यार्थी को विकास में देरी सम्बन्धी समस्याएँ थीं। यानी, उसे मोटर कौशल, सामाजिक व्यवहार और संवाद करने में मुश्किल होती थी। ऊपर से उसे नए वातावरण और अपरिचित भाषा का सामना भी करना पड़ा।

इस नए विद्यार्थी का कक्षा में स्वागत किया गया। शिक्षिका ने उसे अपना नाम बताया, और सभी विद्यार्थियों से कहा कि वे भी इसी तरह अपने नए सहपाठी से परिचय करें।

जल्द ही देखने में आया कि वह बाक़ी विद्यार्थियों के साथ स्थिर होकर नहीं बैठ पाता था; लगातार कोई-न-कोई शरारत करता, और दूसरों को परेशान करता रहता था। वह किसी भी चीज़ पर पाँच मिनट से ज़्यादा ध्यान नहीं दे पाता था, और उस पर हर समय व्यक्तिगत रूप से ध्यान देना पड़ता था।

विद्यालय में आने के एक महीने के बाद उसका बेसलाइन आकलन किया। पता चला कि उसे सूक्ष्म और सकल मोटर कौशल विकसित करने की आवश्यकता है। वह सामाजिक रूप से आक्रामक था। यानी, लड़ता-झगड़ता था, किसी भी गतिविधि में भाग नहीं लेता, और शब्द ज्ञान में पिछड़ा हुआ था। बाक़ी विद्यार्थी जिस स्तर पर थे, और जिस गति से आगे बढ़ रहे थे, वहाँ तक लाने के लिए उसे शुरू से पढ़ाना उसके और उसके शिक्षक, दोनों के लिए कठिन था।

उसके परिवार और समुदाय की पृष्ठभूमि का विश्लेषण करने पर पता चला कि वह परिवार में सातवाँ बच्चा था, और एकमात्र लड़का होने के कारण उसके माता-पिता ने बड़े लाड़-प्यार से पाला था, और उसे आँगनवाड़ी में भी नहीं भेजा था।

हमने उसके पोषण पर ध्यान देना शुरू किया क्योंकि उसे घर पर ठीक से खाना नहीं मिल रहा था। हर दिन बिना चूके उसे दूध और अण्डे दिए जाते थे। उसके सकल मोटर कौशल को बेहतर बनाने के लिए, उसके शारीरिक सन्तुलन को बनाए रखते हुए चढ़ने, कूदने, दौड़ने, फेंकने, पकड़ने, आदि के भरपूर अवसर दिए ताकि उसके इस कौशल में सुधार हो सके। बच्चा अपने शरीर का सन्तुलन बनाकर 20-30 मीटर तक भी नहीं दौड़ पाता था, और एक फ़ुट से ज़्यादा छलाँग नहीं लगा सकता था। इसलिए यह प्रशिक्षण लगातार जारी रहा।

भाषा के क्षेत्र में, उसके लिए कन्नड़ पढ़ना और लिखना कठिन था, इसलिए हमने उसके कन्नड़ में सुनने और बोलने पर ध्यान केन्द्रित किया। अँग्रेज़ी के लिए शिक्षक ने मुख्य रूप से उसके बोलने के कौशल पर ध्यान दिया। उसके भाषा कौशल को विकसित करने में उसकी मदद करना बहुत चुनौतीपूर्ण था। हमने उसके आस-पास की जगहों से शब्द लेने शुरू किए, और मूर्त वस्तुओं का इस्तेमाल किया। लेकिन वह चित्रों से केवल दो-तीन शब्द ही याद रख पाता था। इस गतिविधि को कई दिनों तक जारी रखा, और उसे चित्रों से शब्द कॉपी करने के लिए कहा। धीरे-धीरे उसने कुछ शब्द सीखे और फिर उसे अँग्रेज़ी में क्रिया शब्द और निर्देश देने शुरू किए। उसके साथियों ने इसमें उसकी मदद की। उसे क्रियाओं के साथ शब्दों को समझाने की कोशिश की। फिर उसे छोटे-छोटे सिचुएशन कार्डों से परिचित कराना शुरू किया। शुरुआत में हमने कार्ड को ज़ोर से पढ़ा, और विद्यार्थी को उसे दोहराने के लिए कहा। इससे उसका उच्चारण बेहतर हुआ। इस सहायता की वजह से, वह सहायक क्रियाओं का उपयोग किए बिना दो से तीन वाक्य पूरे करने लगा।

जब उसने कुछ बुनियादी शब्दावली सीख ली, उसे सम्बन्धित चित्रों के साथ वर्णमाला सिखाना शुरू किया। उसे अभी भी एक ही अक्षर वाली चार-पाँच तस्वीरें याद करने में कठिनाई हो रही थी। जब उसे चित्र बनाने के लिए कहा गया, वह ऐसा नहीं कर पाया। इसलिए प्रत्येक अक्षर के लिए केवल दो चित्र ही दिखाने शुरू किए। चित्र बनाने के लिए उसे चित्र को ट्रेस करने को

कहा। वह चित्रों को ट्रेस करने में इतना सहज था कि धीरे-धीरे चित्र के विषय से सम्बन्धित शब्दावली और अपनी बातचीत में अधिक क्रिया शब्दों का उपयोग करने लगा। आत्मविश्वास के साथ नोटबुक में वर्णमाला लिखने लगा और चित्र भी बनाने लगा। इस बुनियादी योग्यता को हासिल करने के लिए विद्यार्थी को तैयार करने में 7-8 महीने लगे। इस दौरान सहपाठियों ने लगातार उसकी मदद की।

यहाँ पर एक गतिविधि का उदाहरण दिया गया है। इसका उपयोग शब्दावली विकसित करने के लिए किया था।

गतिविधि : पाँच उँगलियों वाले वाक्य

इस गतिविधि से विद्यार्थियों को पाँच पूर्ण वाक्यों में किसी वस्तु या स्थिति का वर्णन करने में मदद मिलती है। इसका उद्देश्य है विद्यार्थियों को एक शब्द से शुरू करके पूरे वाक्य, और अन्त में छोटे-छोटे अनुच्छेद लिखने में सक्षम करना। विद्यार्थियों को एक थीम या विषय दिया जाता है। उदाहरण के लिए, बाघ। 1. बाघ जंगली जानवर हैं; 2. बाघ जंगलों में रहते हैं; 3. बाघ माँस खाते हैं; आदि। विद्यार्थी हर वाक्य के लिए एक उँगली का उपयोग करते हैं, और उन्हें बोलते समय एक-एक करके उँगली बन्द कर लेते या मोड़ लेते हैं।

कक्षा, घर या आस-पास से कोई भी चीज़ चुनी जा सकती है। विद्यार्थियों से उस चीज़ के नाम, रंग, आकार / वज़न, मिलने के स्थान (जैसे– घर, पार्क, अस्पताल, आदि), और उपयोग के आधार पर उसका वर्णन करने को कहा जाता है। यह गतिविधि शब्द ज्ञान, गणित की बुनियादी अवधारणाओं (जैसे– आकार / वज़न), और सोचने के कौशल का निर्माण करती है। इससे विद्यार्थी की समग्र समझ का आकलन करने में तो मदद मिलती ही है, हर विद्यार्थी को आत्मविश्वास से बोलने और समान रूप से भाग लेने के लिए प्रोत्साहन भी मिलता है।

अब यह बच्चा पहली कक्षा में है। तीन अक्षरों वाले शब्दों को पढ़ और लिख रहा है, तथा आत्मविश्वास के साथ अँग्रेज़ी बोलना सीख रहा है। पहली कक्षा की अँग्रेज़ी शिक्षिका उसे दिए गए शब्दों का उपयोग करके वाक्य बनाने, उन्हें लिखने और सरल अनुच्छेद पढ़ने में मदद कर रही हैं। इस विद्यार्थी ने कई चुनौतियों को पार किया है, और यह सब लगातार सहायता, व्यक्तिगत ध्यान और साथियों की भागीदारी से सम्भव हुआ है।

विद्याश्री एस एस, शिक्षिका, अज़ीम प्रेमजी स्कूल, कलबुर्गी, कर्नाटक

स्वयं करके सीखने से बदला विद्यालय का माहौल

अरुण शंकर राय

एक बार विद्यालय में निरीक्षण के लिए विभाग से कोई अधिकारी आए। उस समय प्रार्थना सभा चल रही थी। उन्होंने विद्यार्थियों से कुछ सवाल पूछे। मसलन, हमारे देश के प्रधानमंत्री कौन हैं; किस-किस को विद्यालय अच्छा लगता है; आदि। अधिकांश विद्यार्थियों ने जवाब देने के लिए हाथ उठाए। लेकिन जैसे ही उन्होंने पूछा, "विद्यालय क्यों अच्छा लगता है?" ज़्यादातर चुप हो गए। कुछ और भी सवाल थे। मिसाल के तौर पर, आपके विद्यालय का नाम, आपके गाँव का नाम, जो शिक्षक पढ़ाते हैं उनका नाम, आपकी किताब में कौन-कौन-सी कविताएँ व कहानियाँ हैं, इत्यादि।

जिन सवालों का जवाब 'हाँ' या 'ना' में या एक-दो शब्दों में था, उनके जवाब विद्यार्थी आसानी से दे रहे थे। लेकिन जिन सवालों का जवाब थोड़ा बड़ा या वर्णनात्मक और ज़्यादा सोचकर देना होता था, उसके जवाब देने में वे झिझक रहे थे। जब निरीक्षक ने कोई कहानी सुनाने के लिए कहा, किसी ने नहीं सुनाई, जबकि पुस्तकालय व पुस्तक सम्बन्धी तरह-तरह के कार्य विद्यालय में लगातार हो रहे थे।

उस दिन मुझे अच्छा नहीं लगा। एक सवाल ज़ेहन में घूमता रहा कि इतनी मेहनत के बावजूद विद्यार्थी जवाब देने में झिझक क्यों रहे हैं। अच्छा न लगने के पीछे यह अपेक्षा नहीं थी कि विद्यार्थी रोबोट की तरह यांत्रिक रूप से रटे-रटाए जवाब दे दें। फिर भी सवाल था कि दिक़्क़त कहाँ है, जिसे हम समझने में विफल रहे या समझकर भी उस पर काम नहीं कर पाए।

मैं ख़ुद भी किताबें पढ़ने का शौक़ीन हूँ, और विद्यार्थियों को भी पढ़ने के लिए प्रेरित करता रहता हूँ। मैंने 'मूँछों वाली माँ' के नाम से चर्चित शिक्षाविद गिजुभाई बधेका की किताबें *दिवास्वप्न*, आदि और तेत्सुको कुरोयानागी की *तोत्तो-चान* भी फिर से पढ़ीं।

इन किताबों से समझ आया कि शिक्षक को सहज, सरल, मृदुभाषी व मिलनसार होना चाहिए। सीखा कि विद्यार्थी स्वयं

चित्र 1: विद्यालय की योजना में विद्यार्थियों को शामिल करने से उनमें ज़िम्मेदारी की भावना आती है

करके सीखते हैं। ख़ुद करने से उन्हें ठोस अनुभव प्राप्त होते हैं। उनमें नया कार्य करने की हिम्मत आती है, विश्वास विकसित होता है, और झिझक भी दूर होती है। कक्षा की गतिविधियों में सिर्फ़ बातचीत कर लेना या समझा देना ही पर्याप्त नहीं होता। इनमें प्रत्येक विद्यार्थी की भागीदारी हो, उसे मंच पर आने का मौक़ा मिले, इस तरह की योजना बनाना ज़रूरी है। शायद यह छूट रहा था। हम उन्हें स्वयं से करके सीखने या पढ़ने-लिखने की प्रक्रिया में उनकी सक्रिय व सार्थक सहभागिता नहीं करा पा रहे थे।

मैंने माहवार, सप्ताहवार व दैनिक कार्ययोजना बनानी शुरू की। मसलन, रोज़ाना विद्यार्थियों के साथ कुछ समय पुस्तकालय में बिताएँ; उनके स्तर की किताबों से उनका परिचय बढ़ाएँ; उन्हें स्वयं से किताबें चुनने व पढ़ने को कहें; पढ़ी गई किताबों पर विस्तार से बातचीत करें; उन्हें अपने अनुभव बताने और लिखने को कहें; आदि। हमने यह सब करना शुरू किया। साथ ही, विद्यार्थियों से रोज़ाना डायरी लिखने की बात करके उन्हें लगातार लिखने के लिए प्रोत्साहित किया गया। यह चरणबद्ध योजना कुछ महीनों के लिए रखी गई। इसमें यूट्यूब ने भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। कक्षा स्तर के अनुरूप कुछ वीडियो दिखाए जिनसे समझ बनी कि मंच पर प्रस्तुति किस तरह देनी चाहिए; बिना डर व झिझक के, पूर्ण विश्वास से, सधी हुई आवाज़ में कैसे बोलना चाहिए; बोलने से पहले क्या-क्या तैयारियाँ होनी चाहिए; आदि। किताबों को इशू करवाने, पढ़ने, उनकी देखरेख करने, और फिर से जमा कराने में विद्यार्थियों को शामिल करने की कोशिश की जाने लगी।

पढ़ने-लिखने से जुड़ी विद्यालय की प्रत्येक योजना में विद्यार्थियों को शामिल करने लगे। इसका सकारात्मक असर पड़ा। अब शिक्षकों और विद्यार्थियों के बीच ज़्यादा खुलकर बातचीत होने लगी। विद्यार्थी विद्यालय को भी ऐसी जगह समझने लगे जहाँ कुछ भी तय करने में उनकी अहम भूमिका थी। मुझे लगता है इस भूमिका ने उन्हें अधिक ज़िम्मेदार बनाया। वे हर चीज़ में रुचि लेने लगे। इसका असर उनके सीखने, सीखे हुए को अभिव्यक्त करने, और उनके आत्मविश्वास पर पड़ा। इन प्रयासों के अन्तर्गत लगातार मेहनत, संवाद, किताबों के साथ गतिविधियाँ करने, और विद्यार्थियों को अपनी बात कहने के ज़्यादा-से-ज़्यादा मौक़े देने पर काम हुआ। तक़रीबन साल भर बाद सकारात्मक परिणाम दिखने लगे। हमें लगा, यह प्रक्रिया बिना रुके लम्बे समय तक चलनी चाहिए।

सभी विद्यार्थियों की सूची बनाई गई, और उनकी क्षमतानुसार मंच पर छोटी-छोटी प्रस्तुतियों के लिए बुलाया गया। उनके बोलने और प्रस्तुतीकरण का वीडियो बनाना भी शुरू किया। वे स्वयं का और साथियों का वीडियो देखकर समझते कि आत्मविश्वास के साथ सीधे खड़े होने, विषय पर पकड़, हाव-भाव से व धाराप्रवाह बोलने, आदि के बारे में कहाँ सुधार की ज़रूरत लग रही है।

धीरे-धीरे विद्यार्थियों में विश्वास पनपने लगा। फिर भाषण प्रतियोगिताएँ आयोजित की जाने लगीं। इनमें एक डिब्बे से एक पर्ची निकालकर, उस पर लिखे विषय पर एक-दो मिनट में तुरन्त 5 से 10 वाक्य बोलने होते हैं, अलग से सोचने का समय नहीं मिलता है। इस तरीक़े से विद्यार्थी हर समय चौकन्ने व उत्साहित रहने लगे। विषयों को जानने-समझने और तैयारी के लिए बहुत सारा पढ़ने, बात रखने व पूछने पर अधिक ध्यान देने लगे। इस वजह से अब विद्यालय के ज़्यादातर विद्यार्थी आत्मविश्वास से बोलने में सहज हुए हैं।

अरुण शंकर राय, शिक्षक, कम्पोज़िट स्कूल, पुरेन्द्र, सेवापुरी, वाराणसी, उत्तर प्रदेश

संगीत भी है सिखाने का ज़रिया

प्रिया पाण्डे

अज़ीम प्रेमजी स्कूल दिनेशपुर, ऊधमसिंह नगर में विद्यार्थियों के साथ काम करते हुए संवाद के दौरान जाना कि संगीत को विद्यार्थियों के व्यक्तित्व में निखार लाने, उनके सीखने को रुचिपूर्ण बनाने का ज़रिया बनाया जा सकता है। संगीत कक्षा का यह अनुभव एक शिक्षक के रूप में मेरे लिए बहुत कुछ सीखने का अवसर था। इस अनुभव ने मेरे इस विश्वास को भी पुख़्ता किया कि शिक्षा केवल किताबों तक सीमित नहीं होती।

मैं एक ऐसे स्कूल में पढ़ा रही हूँ जहाँ अधिकांश विद्यार्थी विस्थापित बंगाली परिवारों से हैं। इनकी भाषा बंगाली है। परिवारों का आर्थिक स्तर कमज़ोर है। हालाँकि, अब कुमाऊँनी बोलने वाले पहाड़ी विद्यार्थियों की तादाद भी विद्यालय में लगातार बढ़ रही है।

शुरुआती कक्षाओं में संगीत सिखाते हुए महसूस किया कि कक्षा 1 और 2 के विद्यार्थियों को संगीत से जोड़ना रोचक प्रक्रिया है, ख़ासकर जब पैटर्न के माध्यम से संगीत सिखाया जाए। हर विद्यार्थी में लय की समझ बनाना मेरा उद्देश्य था ताकि उनमें संगीत के प्रति रुचि विकसित हो सके। ज़रूरी नहीं कि हमारे पास बजाने के लिए हमेशा वाद्य यंत्र हों ही, लय को समझने का कोई भी तरीक़ा हो सकता है। जैसे– तालियों की लय, पत्थरों से लय, घण्टी बजने की लय, कदमताल की लय, आदि।

सरल 4-बीट पैटर्न जैसे 1 2 3 4 (तीन ताल) या फिर 8-बीट पैटर्न जैसे– 1 2 3 4 5 6 7 8 (कहरवा ताल) को सीखते हुए विद्यार्थी तालबद्धता को महसूस करने लगे। उन्होंने लय के पैटर्न को आत्मसात् किया। कई विद्यार्थी जल्दी ही बोंगो और कांगो जैसे वाद्य यंत्र बजाने लगे। कुछ विद्यार्थियों को शुरुआत में कठिनाई हुई, लेकिन जो पहले से सीख चुके थे, उन विद्यार्थियों ने उनकी मदद की। इस प्रक्रिया में प्रतिस्पर्धा की भावना के बजाय सहयोग और सामूहिक सीखने का वातावरण बना। सभी ने एक दूसरे को प्रोत्साहित करते हुए लय को समझा और उसका आनन्द लिया।

ज़रूरी नहीं कि हमारे पास बोंगो या कांगो हो। ताली के ज़रिए, घर में किसी भी बर्तन में या फिर मेज़ पर भी रिदम दे सकते हैं। विद्यार्थियों ने इन्हीं 4-बीट 8-बीट पैटर्न को बॉडी परकशन (ताली बजाना, उँगली चटकाना, छाती या जाँघ पर थाप देना) के साथ भी सीखा। जैसे– 4-बीट पैटर्न (1 2 3 4) में, 1 में ताली, 2 में उँगली चटकाना, 3 में छाती पर और 4 में जाँघ पर थाप देना। इस पैटर्न को विद्यार्थी लगातार करते गए। इस पैटर्न को सीखने में सीखना भी था, संगीत भी और आनन्द भी।

इस तरह की प्रक्रियाएँ न केवल संगीत सम्बन्धी संवेदनशीलता को बढ़ाती हैं, बल्कि गणित के साथ भी उनका जुड़ाव बनाती हैं।

विद्यार्थी हिन्दी और नेपाली बालगीत, अँग्रेज़ी कविताएँ बड़े उत्साह से सीखते हैं, और इन्हें गाते समय बेहतरीन लय भी देते हैं। कभी-कभी हम मिलकर लय के साथ डांस करते और खेल भी खेलते हैं। मसलन, चॉक से ज़मीन पर 12 बॉक्स बनाते हैं, और कोई भी लोकगीत बजाते हैं। फिर उन बॉक्स में गीत की लय के हिसाब से कूदते हैं, बिल्कुल उसी तरह जैसे किसी गीत में हाथ से ताली बजाते हैं। इन पलों में विद्यार्थियों की मुस्कुराहट, खिलखिलाहट देखने लायक़ होती है। इस दौरान वे सिर्फ़ संगीत नहीं सीखते, बल्कि सामूहिकता के सुख का भी एहसास करते हैं।

चित्र 1: संगीत विद्यार्थियों में सीखने के प्रति ललक को बढ़ाता है

विद्यार्थियों के गायन के साथ-साथ उनकी रचनात्मकता को निखारने में भी मेरा प्रयोग सफल रहा। मैं चाहती थी कि वे ख़ुद के गाने लिख पाएँ ताकि उनकी भाषाई दक्षता भी निखरती रहे। मैं कक्षावार 5-6 विद्यार्थियों के समूह बना देती। कोई बोल सोचता, कोई ताल देता, कोई धुन बनाता, और फिर सभी अपने-अपने समूह के साथ कक्षा में ही प्रस्तुति भी देते। इसी कड़ी में कक्षा 3 से 10 के विद्यार्थियों द्वारा गीतों की किताब का निर्माण भी किया गया। उनसे कहा कि अपने आस-पास तितली, हवा, पेड़, बारिश, नदी जैसी चीज़ों को गीतों के फ़ॉर्मेट में पन्नों पर लिख डालो, उन्हें कोई धुन दे दो, बन गया गीत। इस तरह उन्होंने ने बहुत-से गीत लिखे। सातवीं के विद्यार्थियों द्वारा बनाया गया एक गीत है–

प्रदूषण न फैलाएँ, सबकी जान बचाएँ
आओ-आओ हम सबको ये बतलाएँ
पेड़-पौधे लगाएँ, प्रदूषण को भगाएँ
आओ-आओ हम पर्यावरण बचाएँ...

इसी तरह, तीसरी के विद्यार्थियों ने मिलकर कुछ ऐसा गीत बनाया–

दा दिर दा रा, दा रा रा

क्लास में जब जाते हम, रस्ते में दिखती बिल्ली मौसी

म्याऊँ-म्याऊँ भई म्याऊँ-म्याऊँ, दा दिर दा...

सिर पक जाते सवालों से, पढ़ाई इतनी बोरिंग क्यों होती?

कोई तो बताओ भई, कोई तो बताओ, दा दिर दा...

डांस करने में सभी विद्यार्थी दिलचस्पी लेते हैं। कोशिश करती हूँ कि हर कक्षा के विद्यार्थियों को अलग-अलग जगहों के लोकनृत्यों के स्टेप सिखा पाऊँ। इसके लिए 15 मिनट का समय रखा है। अच्छा लगता है जब हम सब मिलकर एक साथ डांस के स्टेप सीखते हैं। जिन विद्यार्थियों को दिक़्क़त होती है उनकी वे विद्यार्थी मदद करते हैं जो सीख चुके होते हैं। मैंने जाना कि सभी बेहतर करना चाहते हैं। हम मिलकर बिना किसी प्रतियोगिता की भावना के एक दूसरे के डांस को निखार सकते हैं। उनके आत्मविश्वास को, उनकी ख़ुशी को तब महसूस कर पाती हूँ जब वो मुझे गले लगाते हैं, अपनी फ़ीलिंग बताते हैं। मैंने जाना कि विद्यार्थी बहुत रचनात्मक होते हैं बस उन्हें थोड़ा प्रेरित और गाइड करना होता है।

कुछ कक्षाओं के दौरान हमने वाद्य यंत्र बनाने का काम भी किया। कक्षा 3 से 8 तक के विद्यार्थियों ने कुछ वाद्य यंत्र बनाए। जैसे– दो कटोरियों में कंकड़ भरकर उन्हें टेप से जोड़कर डमरू जैसा कुछ बनाया। कुछ बच्चों ने गत्ते, रबर, तार आदि के उपयोग से गिटार जैसा कुछ बनाने का प्रयास भी किया। ऐसे ही कुछ और यंत्र भी बनाए। इनसे अलग-अलग तरह की आवाज़ आती थी। विद्यार्थियों ने असेम्बली में ख़ुद के द्वारा बनाए वाद्य यंत्रों से एक दूसरे के साथ जुगलबन्दी भी की। विद्यार्थियों के साथ अगला प्रयोग लोकगीत पर किया। पहले-पहल विद्यार्थियों की लोकगीतों को सीखने में अरुचि दिखाई देती थी। वे उनके बोल व लय को पकड़ नहीं पाते थे। लेकिन जब लगातार उन्हें बंगाली, गुजराती, राजस्थानी, नेपाली, छत्तीसगढ़ी, पहाड़ी, और सिंगापुरी व जापानी जैसी विदेशी भाषाओं के गीत सिखाने लगी, उन्हें मज़ा आने लगा। कभी-कभी एक ही गाने को अलग-अलग सुर में सुनाकर पूछती हूँ कि बताओ, गाने की कौन-सी पंक्ति ग़ुस्से वाली लग रही है; कौन-सी उदास; या फिर कौन-सी ख़ुशी वाली; आदि। विद्यार्थी बताते भी हैं।

संगीत शिक्षण की शुरुआत में मुझे कई चुनौतियों का सामना भी करना पड़ा, क्योंकि अन्य विषयों की तुलना में विद्यार्थी संगीत में कम रुचि दिखाते थे। पहले ही साल बाल शोध मेले में संगीत के स्टॉल के लिए मुझे कुछ विद्यार्थियों को चुनना था। मैंने कुछ को चुना भी, लेकिन वे भागीदारी के लिए तैयार नहीं थे। कारण पूछने पर जवाब मिला कि संगीत में आने से अन्य विद्यार्थी हँसते हैं। थोड़ी और बातचीत से समझ आया कि विज्ञान, गणित या अन्य विषयों में जाने को तो गर्व की बात समझा जाता है, लेकिन संगीत को गम्भीरता से नहीं लेते। अब बदलाव आया है। स्थितियाँ पहले से काफ़ी बदल गई हैं। अब विद्यार्थी संगीत की कक्षा में आत्मविश्वास के साथ आते हैं, गाते हैं, और इसे दूसरे विषयों के समकक्ष पाते हैं।

प्रिया पाण्डे, संगीत शिक्षक, अज़ीम प्रेमजी स्कूल, दिनेशपुर, ऊधमसिंह नगर, उत्तराखण्ड

टीएलएम की दुनिया और विद्यार्थियों का सीखना

रश्मि मिश्रा

कक्षा में पढ़ाने के दौरान मेरा अनुभव रहा है कि जब विद्यार्थियों को शिक्षण सामग्री की सहायता से सिखाया, समझाया जाता है उनके लिए सीखना रुचिकर और आसान हो जाता है। छोटे विद्यार्थियों के सीखने के बारे में यह बात और भी ज़्यादा सही है। लेकिन मुश्किल यह है कि सभी दक्षताओं और सीखने के प्रतिफल पाने के लिए शिक्षण अधिगम सामग्री, यानी टीएलएम, नहीं मिल पाता है। टीएलएम का न मिलना कई बार एक चुनौती बन जाती है।

विद्यालयी शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2023 सुझाती है, "बुनियादी चरण के लिए आवश्यक अधिकांश टीएलएम स्थानीय रूप से उपलब्ध और कम लागत वाली सामग्री का उपयोग करके बनाए जा सकते हैं। शिक्षकों को स्थानीय रूप से उपलब्ध सामग्री से सरल टीएलएम बनाने की क्षमता विकसित करनी चाहिए।" इसे पढ़कर इस दिशा में सोचना शुरू किया। अपनी समझ से आँगनवाड़ी के विद्यार्थियों के शिक्षण के लिए मैंने दो टीएलएम बनाए।

चलिए, आपको अपने टीएलएम की दुनिया में ले चलती हूँ जहाँ अपने द्वारा बनाए और उपयोग में लाए टीएलएम के अनुभव साझा करूँगी।

अण्डे का फ़ण्डा : सीखने का मज़ेदार ज़रिया

यह रचनात्मक टीएलएम आँगनवाड़ी और कक्षा 1-2 के विद्यार्थियों को बुनियादी भाषा और संख्या ज्ञान से जुड़ी दक्षताएँ / कौशल सिखाने के लिए बनाया। इससे विद्यार्थी खेल-खेल में संख्याओं को पहचानने, गिनने, सही क्रम में लगाने जैसी दक्षताएँ हासिल करते हैं। इसका उपयोग भाषा शिक्षण के लिए भी किया गया जिसमें उन्होंने अक्षरों को पहचानना, बोलना, आदि सीखा।

मैंने देखा कि बिना शिक्षण सामग्री के छोटे विद्यार्थियों को 1 से 10 तक गिनती सिखाने, संख्याओं के नाम बोलने, उन्हें गिनने, पहचान करने, क्रम से लिखने, संख्या चिह्न सिखाने में कुछ विद्यार्थियों को सीखने में बहुत मुश्किल आ रही थी। इसलिए यह टीएलएम बनाया।

बनाने का तरीक़ा

इसे बनाने के लिए गत्ते की बनी अण्डे रखने की एक ख़ाली ट्रे लेकर पोस्टर कलर से लाल रंग कर दिया। फिर एक अन्य पुराना गत्ता लेकर उस पर अण्डे की कई आकृतियाँ बनाईं, और उन्हें काटकर सफ़ेद कलर से रंग दिया। अब मेरे पास गत्ते से बनी अण्डे की 10-15 आकृतियाँ हो गईं। इसके बाद अण्डों की इन आकृतियों की एक तरफ़ 1 से 10 तक संख्याएँ, और दूसरी तरफ़ वर्णमाला के कुछ अक्षर क, म, छ, आदि लिख दिए। अन्त में, एक लाल रंग के चार्ट पेपर से मुर्ग़ी की एक बड़ी आकृति काटकर उसे आइसक्रीम स्टिक की सहायता से चिपका दिया। इसे नाम दिया 'अण्डे का फ़ण्डा'।

इस टीएलएम की मदद से आँगनवाड़ी केन्द्र के विद्यार्थियों के साथ काम करने का प्रयास किया। इसमें शहर और गाँव, दोनों परिवेश के विद्यार्थी शामिल थे। इसका उपयोग करते हुए निर्धारित अधिगम प्रतिफलों पर भी कार्य किया। जैसे–

- अण्डों की गिनती करना;
- उन पर लिखी संख्याओं की पहचान करना;
- इन्हें बोलकर बताना;
- किसी भी संख्या को पूछने पर उसी संख्या का अण्डा चुनना;
- उन्हें संख्या के अनुसार क्रम से जमाना; आदि।

इससे विद्यार्थियों में सीखने की रुचि व उत्सुकता विकसित हुई, उन्हें बहुत मज़ा आया, और उनकी ग़लतियों में सुधार होने लगा।

सोचा कि इसका उपयोग अक्षरों की पहचान जैसी दक्षताओं के विकास के लिए कर सकती हूँ। लेकिन इसके पहले भाषा की कुछ अन्य दक्षताओं पर कार्य किया। जैसे– कविता-गीत सुनना, हाव-भाव से सुनाना और आनन्द लेना, छोटे निर्देशों को सुनना और उनका पालन करना, बोलना, प्रिंट की पहचान कर पाना, चित्र पठन, व रंग भरने और आड़ी-खड़ी लकीरों को जोड़ने जैसे सूक्ष्म कौशल विकास पर गतिविधियाँ, आदि।

मैंने अण्डों की आकृतियों की दूसरी तरफ़ अक्षर लिख दिए, और विद्यार्थियों के साथ अक्षरों से परिचित करवाने, उनकी पहचान करने, पढ़ने और बोलने पर कार्य किया। पहले उन्हें लिखे हुए पूरे अक्षर पढ़ाए, और एक-एक करके जिस अक्षर का नाम लिया (जैसे– क, छ, म, आदि) उसे पहचानकर उठाने को कहा। शुरुआत में उन्होंने कभी सही, कभी ग़लत अक्षर उठाए, लेकिन धीरे-धीरे वे खेल-खेल में एक दूसरे की मदद करते हुए मज़े के साथ सीखते गए। इस तरह एक टीएलएम का इस्तेमाल दो विषयों पर किया जो बेहद रोचक और मज़ेदार रहा।

शार्क और मछलियाँ : खेल से संख्याओं की समझ

चित्र 1: बुनियादी चरण में विद्यार्थी टीएलएम के ज़रिए ख़ुश होकर सीखते हैं

अपने अनुभव से समझ आया कि टीएलएम विद्यार्थियों का ध्यान और एकाग्रता बढ़ाने में भी मदद करते हैं। जब वे कोई खेल या चित्र देखते हैं, या उनका ध्यान टीएलएम के साथ की जाने वाली गतिविधि में होता है, वे ज़्यादा और स्थाई सीखते हैं। मैंने *फ़ाउण्डेशनल स्टेज के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2022* में पढ़ा, "बुनियादी चरण में विद्यार्थी तब ज़्यादा सीखते हैं जब वे कई इन्द्रियों का उपयोग करते हैं, और सक्रिय रूप से अपने हाथों का इस्तेमाल करते हैं। खेलने के लिए साधारण खिलौनों से लेकर गिनती और अंकगणित के लिए जोड़-घटाव तक, इस चरण में विभिन्न प्रकार के टीएलएम आवश्यक हैं।"

इसलिए एक अन्य मज़ेदार टीएलएम भी 3 से 6 वर्ष के विद्यार्थियों को 1 से 10 तक की संख्याओं से जुड़े प्रतिफलों पर काम करने के लिए बनाया। उनके साथ मिलकर इसका नाम रखा 'शार्क और मछलियाँ'।

बनाने का तरीक़ा

- एक गत्ते का डिब्बा लिया और उसके चारों तरफ़ रंगीन काग़ज़ चिपका दिया।
- फिर डिब्बे के ऊपर की तरफ़ एक छेद किया और एक डिब्बे के बग़ल में।

- काग़ज़ की सहायता से शार्क की आकृतियाँ, जैसे आँखें, दाँत, मुँह, काँटे, आदि काट लीं, और सही जगह पर चिपका दीं।
- अब यह ऐसा दिखने लगा मानो शार्क ने अपना मुँह खोला हुआ है।
- इसके बाद अलग-अलग रंगीन शीट से छोटी-छोटी मछलियों की आकृतियाँ काटीं, और उन पर 1 से 10 तक संख्याएँ लिखीं।

इसका उपयोग शुरू करते हुए उनको बताया कि शार्क बहुत बड़ी मछली होती है। कुछ विद्यार्थियों को उसके बारे में पहले से पता था। उन्होंने कहा कि इसके दाँत बहुत नुकीले होते हैं। यह बहुत फुर्तीली होती है। फिर शार्क का चित्र और वीडियो दिखाकर उस पर बातचीत की। जैसे–

- शार्क मछली कहाँ रहती है;
- उसका आकार कैसा होता है;
- उसके दाँत कैसे होते हैं;
- वह क्या खाती है; आदि।

विद्यार्थियों ने बताया, "जब उसे भूख लगती है, वह छोटी मछलियों को खाती है।"

मैंने कहा, "मान लो अब शार्क को भूख लगी है। इसे क्या खिलाएँ?"

विद्यार्थियों ने एक साथ कहा, "छोटी मछलियाँ।"

अब मैंने छोटी मछलियाँ निकालीं जो रंगीन हार्डशीट से बनी हुई थीं। उन पर 1 से 10 तक संख्याएँ लिखी हुई थीं। पहले एक-एक करके मछलियाँ क्रम से उठाईं, और विद्यार्थी संख्या का नाम बोलते गए। फिर क्रम के अनुसार वे शार्क के मुँह की तरफ़ छोटी मछलियाँ गिनते हुए क्रम से गत्ते में डालते गए। उन्होंने देखा कि सारी मछलियाँ शार्क के पेट में जमा हो चुकी हैं। इसके बाद उन्होंने सारी मछलियाँ निकालीं, उन्हें गिना और क्रम से जमाया।

इस तरह विद्यार्थियों ने टीएलएम का उपयोग मज़े और उत्साह के साथ किया, और शार्क को रंगीन मछलियाँ खिलाकर 1 से 10 तक संख्याएँ गिनना, संख्या पहचान और क्रम समझना सीखा।

संख्याओं से परिचय करवाने से पहले मैंने विद्यार्थियों के साथ संख्या पूर्व अवधारणा पर काम किया। इसमें मौखिक रूप से बड़ा-छोटा-उससे छोटा, लम्बा-छोटा, ऊँचा-नीचा-उससे नीचा, कम-ज़्यादा जैसी अवधारणाओं पर काम किया। इसके लिए लकड़ी, कंकड़, पत्तियाँ, फ़्लैशकार्ड, गीत, कहानी, वर्कशीट और दूसरी घरेलू वस्तुओं की सहायता से काम किया।

इन दोनों टीएलएम ने न केवल विद्यार्थियों में सीखने की रुचि और उत्साह बढ़ाने में मदद की, बल्कि उनके ध्यान, एकाग्रता, सोचने की क्षमता और भाषाई व गणितीय क्षमताओं के विकास को भी बढ़ाया।

रश्मि मिश्रा, शिक्षिका, अज़ीम प्रेमजी स्कूल, धमतरी, छत्तीसगढ़

सुबह की सभा में नुक्कड़ नाटकों ने बदली तस्वीर

राजेन्द्र शर्मा

एक दिन प्रार्थना सभा में एक विद्यार्थी प्रार्थना शुरू होने के कुछ देर बाद ही बेहोश होकर गिर गया। उस दिन गर्मी बहुत थी। सोचा, इसी वजह से ऐसा हुआ होगा। जब उससे व उसके माता-पिता से बात की, पता लगा कि वह घर पर खाना नहीं खाता था। उसे घर का सादा खाना पसन्द नहीं था। ठेले की चाट-पकौड़ी, गोलगप्पे, आदि पसन्द करता था। कुछ दिनों से वह यही खा रहा था। कुछ विद्यार्थियों ने कहा कि चिप्स, बिस्किट, नमकीन जैसी चीज़ें ही अच्छी लगती हैं। अभिभावकों से जब भी बातचीत होती, अधिकतर की यही शिकायत रहती कि वे घर का भोजन पसन्द नहीं करते हैं। उन्हें बाहर का खाना ही ज़्यादा अच्छा लगता है। इससे समझ आ रहा था कि विद्यार्थियों को ज़रूरी पोषक तत्त्व नहीं मिल रहे थे।

इस बारे में सभी से बात करने के लिए प्रार्थना सभा को चुना। फिर लगा कि प्रार्थना सभा में केवल भाषण देने से कुछ नहीं होगा, कोई नवाचार ही करना होगा।

सोच-विचारकर सबसे पहले ख़ुद की तैयारी के लिए गृहकार्य किया। इसमें शिक्षकों, माता-पिता और विद्यार्थियों से चर्चा करना शामिल था। विद्यार्थियों की दैनिक जीवन की ज़रूरतों को ध्यान में रखा। उन बिन्दुओं की सूची बनाई जिन पर काम करना था।

इसमें खानपान, स्वास्थ्य, कमज़ोरी, दिनचर्या, सोने-जागने की आदतें, खेल खेलना, टीवी व मोबाइल के दुष्प्रभाव, आदि के बारे में सोच-विचार को रखा।

समझ आया कि स्वास्थ्य सम्बन्धी आदतों पर सबसे पहले काम करना होगा। इसके लिए कुछ दिन नहीं, वरन् महीनों का समय चाहिए। सभी कार्य विद्यार्थियों की सहभागिता से हों, इसलिए हर शिक्षक से बातचीत की। जागरूक विद्यार्थियों की टीमें बनाईं, और स्वास्थ्य सम्बन्धी नुक्कड़ नाटक तैयार करने की बात की। जागरूकता के लिए सभी ने मिलकर खानपान, पोषण, स्वास्थ्य व साफ़-सफ़ाई सम्बन्धी पोस्टर बनाए, नारे लिखे व लिखवाए। बीमार और उत्तम स्वास्थ्य वाले व्यक्ति की परिस्थितियाँ कैसी होती हैं, इस बारे में नुक्कड़ नाटक तैयार किया, और मंचन करवाया। इसके लिए हॉस्पिटल, डॉक्टर, मरीज़, नर्स, दवाइयाँ, इंजेक्शन, आदि सामग्रियों का सेट तैयार किया। नाटक में घरेलू और शादी-पार्टी या बाज़ार के भोजन बनाने की प्रक्रिया को दर्शाया। इसमें अच्छा भोजन न करने व साफ़, सुरक्षित भोजन के न बनने के दुष्परिणामों को प्रस्तुत किया गया।

चित्र 1: सुबह की सभा में नवाचारों की ख़ूब गुंजाइश होती है

नुक्कड़ नाटक का प्रस्तुतीकरण प्रार्थना सभा में ही किया। विद्यार्थियों ने रुचि लेकर साफ़, सुरक्षित पौष्टिक भोजन के विचार को समझा। नाटक की समीक्षा विद्यार्थियों से ही करवाई गई। नाटक में दिखाए गए पोषण, स्वास्थ्य, अच्छा भोजन, ख़राब भोजन, साफ़ और गन्दा पानी, हाथों की सफ़ाई, ग्रीष्म ऋतु, फलों का महत्त्व, आदि विषयों के बारे में सवाल पूछे गए। सवाल कुछ इस प्रकार थे– डॉक्टर ने दवा किस रोग की दी; डॉक्टर के पास जाने की आवश्यकता क्यों हुई; बाहर का भोजन दूषित क्यों था; शादी में पानी भण्डारण की क्या व्यवस्था थी; पार्टी में बनने वाली पालक की सब्ज़ी की पालक को कैसे साफ़ किया था; अगर पार्टी की जगह मम्मी भोजन बनातीं तो साफ़-सफ़ाई की क्या व्यवस्था होती; घर में बचे हुए भोजन का क्या करते हैं, और बाज़ार में अगर भोजन बच जाता होगा तो क्या किया जाता होगा; आदि।

इस तरह की बातचीत से खानपान व स्वास्थ्य के बारे में व्यापक समझ बनी। यह सिलसिला कई दिनों तक चला। फिर प्रार्थना सभा में खानपान की आदतों, हाथ धोने के फ़ायदे और तरीक़े, सड़ी-गली सब्ज़ियों की पहचान और नुक़सान, बाज़ार के भोजन, तेल के नुक़सान, बड़े हुए नाख़ूनों के दुष्प्रभाव जैसे विषयों पर 5-6 मिनट के रोचक वीडियो दिखाने शुरू किए।

धीरे-धीरे उनके भीतर सजगता पनपने लगी। अधिकतर विद्यार्थी नाश्ता करके आने लगे। घर के भोजन के बारे में अभिभावकों से भोजन व स्वाद में बदलाव पर भी बातचीत की। उन्हें कहा गया कि सब्ज़ियों में टमाटर या नींबू का प्रयोग करें। कभी-कभी छोले-भटूरे, पाव-भाजी, भेलपुरी, चटनियाँ, गोलगप्पे, या उनकी पसन्द का भोजन बनाएँ। विद्यार्थियों की मदद भी ली जाए ताकि उन्हें भी इस सबका महत्त्व समझ में आए।

कुछ दिनों बाद एक स्वास्थ्य परीक्षण कैम्प लगवाया। इसमें विद्यार्थियों को आँखों, मुँह, दाँतों, नाख़ून, रक्त, आदि के बारे में दिलचस्प तरीक़े से जानकारी देकर उनकी जाँचें की गईं।

कैम्प में चर्चा की गई कि केला, चने, आँवला, नींबू, दही, छाछ, अण्डे, पत्तेदार सब्ज़ियाँ, फलियाँ, साबुत अनाज, जामुन, आदि खाने की अच्छी चीज़ें क्यों हैं। यह भी बताया कि सही भोजन हमारे शरीर के लिए क्यों और कैसे आवश्यक है।

विद्यार्थियों की खानपान की आदतों में सुधार देखा गया क्योंकि अब अधिकतर विद्यार्थियों में यह जागृति आ गई थी कि भूखे नहीं आना है, बाहर का भोजन कम लेना है, फल व सब्ज़ियों को महत्त्व देना है, रात को समय से सोना है, आदि। जिन विद्यार्थियों का हीमोग्लोबिन कम था, उनसे ख़ून बढ़ाने वाले भोजन; गाजर, पालक, अनार, भुना चना, गुड़, खजूर, आदि के बारे में बातचीत की। यह भी चर्चा की गई कि भोजन में प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, वसा, फाइबर, आदि महत्त्वपूर्ण क्यों होते हैं।

प्रार्थना सभा में की गई इस पहल का विद्यार्थियों पर सकारात्मक असर देखा गया। पूरे विद्यालय में कुछ ही समय में इसका परिवर्तन सभी ने देखना शुरू किया। हमने देखा कि विद्यार्थी उत्साहपूर्वक कार्य करने लगे हैं, और जीवन में अच्छे भोजन व साफ़-सफ़ाई के महत्त्व को समझने लगे हैं।

राजेन्द्र शर्मा, शिक्षक, राजकीय उच्च प्राथमिक विद्यालय, रामपुरा, सांगानेर शहर, जयपुर, राजस्थान

समझ और धैर्य से समावेशन सम्भव

शेफ़ाली जैन

पूना कक्षा 2 की बालिका है। वह नियमित तौर पर विद्यालय आती है, लेकिन कक्षा में मौजूद नहीं रहती है। विद्यालय के मैदान में अकेली खेलती रहती है। पिछले साल जब वह कक्षा 1 में थी तब भी उसका व्यवहार यही था, और साथी शिक्षकों ने उसे असामान्य समझ लिया। उसे उपेक्षित-सा कर दिया, सम्भवत: यह सोचकर कि उसके साथ कैसे आगे बढ़ें, वह समझ नहीं पा रहे थे।

पिछले साल मैंने जब कक्षा 2 में पढ़ाना शुरू किया तो विद्यार्थियों से जुड़ाव बनाने के लिए बातचीत शुरू की। कक्षा में 25 विद्यार्थी थे। हर विद्यार्थी से उनका, उनके माता-पिता का नाम पूछा। सभी नाम बताने में सक्षम थे। इन्हीं में एक बालिका पूना बिल्कुल अलग-थलग बैठी थी। उसका कक्षा में कोई ध्यान नहीं था, और मेरा ध्यान बार-बार उसी पर जा रहा था। जब तक उसकी बारी आई वह कक्षा से बाहर चली गई, और लकड़ी-कंकड़-पत्थर से कुछ आकृतियाँ बनाने लगी। मैं उसके पास गई, उसका नाम पूछा। उसने थोड़ी अजीब निगाहों से देखा जैसे मैंने उसके काम में बाधा डाल दी हो। मैं कुछ देर रुकी, पर उसने दुबारा मेरी तरफ़ देखा भी नहीं। मैं वापस कक्षा में काम करने लगी। वह बाहर कंकड़-पत्थर और लकड़ी के टुकड़ों से खेलती रही। एक-दो बार बुलाने के बाद भी कक्षा में नहीं आई। उसका पूरा समय मैदान में ही निकला। छुट्टी होने पर विद्यार्थियों के साथ घर चली गई। मेरे ज़ेहन में वह कहीं तो रह गई। उसकी आँखें और हरकतें बार-बार याद आ रही थीं। मैं कुछ समझ नहीं पा रही थी।

उसके व्यवहार के बारे में उसके माता-पिता से बातचीत की, जानना चाहा कि वह घर पर क्या-क्या करती है। उसकी माँ ने बताया कि वह सारे समय बाहर खेलती रहती है। मैंने पूछा, "किसके साथ खेलती है?" उन्होंने बताया, "वो हमेशा अकेली खेलती है।" मैंने पूछा, "ऐसा क्यों? घर में भाई-बहन हैं, उनके साथ क्यों नहीं खेलती?" वो बोलीं, "वह अकेली ही खेलती है।"

अगले दिन से पूना पर अधिक ध्यान देना शुरू किया।

जब मैं विद्यालय पहुँची वह मैदान में खेल रही थी। बाक़ी शिक्षक और विद्यार्थी विद्यालय में आते जा रहे थे। उसने मेरी तरफ़ देखा, मैं उसे देखकर मुस्कुराई। उसने नज़रें फ़ेर लीं। प्रार्थना सभा हुई। सभी विद्यार्थी क़तार में खड़े हुए, पर वह कंकड़-पत्थर से खेलती रही। अन्य शिक्षकों से उसके व्यवहार पर बात की। सबने कहा, "छोड़ो, वो ऐसी ही है!" उसका अवलोकन शुरू किया। वह कंकड़, लकड़ी के टुकड़ों से आकृतियाँ बनाती थी। तीन-चार दिन मैंने भी उसके साथ मिलकर आकृतियाँ बनाईं। उसने देखा, और मेरी बनाई आकृति की नक़ल कर अपनी आकृति बनाई। मुझे यह तो समझ आ गया कि वह सीखती है। इन तीन-चार दिनों में उससे बहुत सारी बातें कीं। जैसे– कंकड़ जमाते हुए उससे पूछा कि अब क्या करें; इस आकृति का क्या नाम है; तुमने ये बनाना कैसे सीखा; क्या खाना खाकर आई हो; आज तुम्हारी कंघी किसने की; आदि। उसने मुझसे एक बात भी नहीं की, लेकिन सुनती रही।

उसे कक्षा में अपने पास बैठाना शुरू किया। उसे कंकड़-पत्थर-लकड़ी से आकृतियाँ बनाने के काम दिए। वह बहुत रुचि से आकृति बनाती, पूरी बन जाने पर मेरी तरफ़ देखती। मैं इशारे से 'हाँ' बोलती, और वह दूसरी आकृति बनाने लगती।

कक्षा के विद्यार्थियों से पूना द्वारा बनाई गई आकृति के लिए ताली बजवाना शुरू किया। अब वह थोड़ा हँसने लगी। धीरे-धीरे उससे सवाल पूछने शुरू किए। तुम्हारा नाम क्या है? पूछने पर उसका जवाब होता, "पूना"। आज क्या खाया है? "रोटी-सब्ज़ी"। मैं जो सवाल पूछती वो एक-दो शब्दों में जवाब देती।

अब वह कक्षा के कुछ नियम समझती और उनका पालन भी करती। जैसे– क़तार में बैठना, कक्षा के बाहर जाना हो तो पूछना, भोजन के समय ही खाना, आदि। उसे कक्षा के विद्यार्थियों के बीच बैठाना शुरू किया। अब वह कक्षा के बाहर नहीं जाती है। कक्षा में बैठकर चॉक से फ़र्श पर कुछ गोदा-गादी करती रहती, और थोड़ी-थोड़ी देर बाद मुझे दिखाती है।

मैं कक्षा में विद्यार्थियों को कविता गायन करवा रही थी। सभी के साथ पूना भी कुछ बोल रही थी। अब वह कक्षा की गतिविधियों में शामिल होने लगी है, लेकिन अभी भी कुछ धीरे सीखती है। मैं उसके सीखने के अनुसार ही उसे गतिविधियाँ देती रही। जैसे– गेहूँ, चना, मटर के मिले हुए बीजों को छाँटना और ढेरी बनाना; लकड़ियों / टहनियों / पत्थरों को छोटे से बड़े के क्रम में रखना; उसे अपनी पसन्द की किसी चीज़ का चित्र बनाने को कहना; कंकड़ गिनना; आदि।

शनिवार के दिन नियमानुसार बाल सभा का आयोजन किया गया। पूना पहले भी इसमें शामिल होती रही है। विद्यार्थियों से पूछा गया कि क्या कोई और कविता सुनाना चाहता है, ऊपर उठे हाथों में एक हाथ पूना का भी था। मैं उसके साहस को देखकर ख़ुश थी। उसे आत्मीयता से पास बुलाया और कहा, "तुम सुनाओ, कौन-सी कविता सुनाना है?" उसने धीरे से कहा, "तितली उड़ी...।" वह कुछ डरी हुई थी, लेकिन सुनाना चाह रही थी। उसने हाव-भाव के साथ जल्दी-जल्दी कविता सुनाई। सभी ने ताली बजाकर उसका प्रोत्साहन किया।

पूना अब किताबों से जुड़ने का प्रयास कर रही है। वह कक्षा में हो रही प्रक्रिया में शामिल हो रही है। गिनमाला के साथ काम करवाते समय ख़ुद से आगे आकर कहती है, "मैम, मैं गुरिया खिसकाऊँगी।" उसकी 1 से 10 तक गिनती की समझ बनने लगी है। वह कंकड़ से गिनती करने लगी है। कभी-कभी ख़ुद मेरे पास आकर पूछती है कि आज आपने क्या खाया, या आपकी बिन्दी अच्छी लग रही है। मेरे जवाब सुनकर उसको ख़ुशी होती है।

पूना के इस सफ़र में मुझे बहुत कुछ सीखने मिला। किसी भी विद्यार्थी के बारे में तुरन्त कोई राय नहीं बनानी चाहिए। सभी अलग-अलग परिवेश से आते हैं। उसके घर पर उससे कोई बातचीत नहीं करता है जिससे वो अकेली रहने लगी। उसके साथ घुलना-मिलना बहुत ज़रूरी है। उसके शुरुआती क्रियाकलाप सामान्य से अलग थे, लेकिन वह कही गई बातों को समझती थी। समझ आया कि उसको प्यार और पर्याप्त मौक़े नहीं मिले हैं। उसकी हरकतों को देखते हुए उसे दूसरे विद्यार्थियों से अलग समझा जाने लगा। इसी वजह से वह धीरे-धीरे उनके समूह से अलग हो गई। उसने कंकड़-पत्थर का साथ लिया, और उनके साथ अपना समय बिताने लगी। जब उसे पास बैठाया, नियमित बातें कीं, उसकी रुचि और स्तर की गतिविधियाँ दीं, वह सभी विद्यार्थियों में शामिल होने लगी। वह अब नियमित विद्यालय आती है, और सीखने का प्रयास करती है। उसके सीखने की गति ज़रूर थोड़ी धीमी है, पर लगता है नियमित, रुचिकर और उसके स्तर के मौक़े दिए जाने पर उसकी सीखने की गति भी बढ़ जाएगी।

शेफ़ाली जैन, प्राथमिक कन्या शाला मोकलपुर, सागर, मध्य प्रदेश

पाठ्यपुस्तक से इतर भाषा विकास के तरीक़े

मनोहर चमोली 'मनु'

सीखने-सिखाने की कोशिशों में बातचीत की अहमियत को सभी जानते हैं। सोचा, विद्यार्थियों में पढ़ने-लिखने के प्रति ललक बढ़ाने और समझ के साथ पढ़ना सिखाने के लिए परम्परा से कुछ हटकर कार्य किया जाए। यह सोचकर पिछली बरसात में कक्षा 6 के 12 विद्यार्थियों के साथ कुछ गतिविधियाँ करने का मन बनाया।

इसके लिए एक तरीक़ा अपनाया मौखिक परिचय का। शुरुआत ख़ुद से की। अपना नाम बताया, और उसे बोर्ड पर लिखा। इसके बाद सभी विद्यार्थियों ने एक-एक कर ऊँची आवाज़ में अपना नाम बताया, और उसे बोर्ड पर लिखते गए। इस तरीक़े से ध्यान से सुनना, आत्मविश्वास से बोलना, और थोड़ा-सा लिखना भी साथ-साथ चला। मैंने देखा कि सुनयना और अवधेश ने तो झट से उठकर काम किया। लेकिन अन्य सहपाठियों—रोहन, रमन, सुप्रिया और नमिता—ने कुछ ज़्यादा समय लिया। उनमें इस गतिविधि में शामिल होने पर झिझक और भय की आशंका साफ़ दिखाई दी। ऐसी स्थिति में, धैर्य से काम लिया और उनका हौसला बढ़ाया।

इस गतिविधि में कई बार जब बोर्ड पर जगह ख़ाली रह जाती है, मैं किसी पसन्दीदा रंग, फ़िल्म या शहर का नाम सभी को बोलकर बताने और लिखने को कहता हूँ। इन नामों को बताने और लिखने में होड़-सी मच जाती है, उनमें उत्साह व ख़ुशी बढ़ जाती है।

यहाँ से बग़ैर पाठ्यपुस्तक के भाषाई कौशलों की मौखिक-लिखित यात्रा आरम्भ हो जाती है। कुछ दिनों बाद बोर्ड पर आए शब्दों से वाक्य बनाना, संज्ञा, सर्वनाम, क्रिया, आदि पर मौखिक

चित्र 1 : पाठ्यपुस्तक से इतर की कहानियाँ भी सिखाने का अच्छा ज़रिया हैं

समझ बनाना सहज हो जाता है। विद्यार्थियों को नए वाक्य बनाने में बड़ा मज़ा आता है। यह सब करते-करते कक्षा के स्तर और सीखे हुए का आकलन भी आसानी से होता जाता है।

मैंने एक और गतिविधि कराई। इसमें विद्यार्थियों के सन्दर्भ का एक शब्द बोला। जैसे– बारिश। और विद्यार्थियों से अपने मन से इस शब्द से जुड़ा एक वाक्य कहने, और उसे कॉपी में लिखने को कहा। उन्होंने सोचकर बताया और लिखा–

"मैं कल बारिश में भीग गई थी।"

"मुझे बारिश अच्छी नहीं लगती।"

"बारिश के दिनों में स्कूल आना अच्छा नहीं लगता।"

"बारिश में नमी बढ़ जाती है।"

"मुझे बारिश के पानी में नहाने में मज़ा आता है।"

"बारिश में पहाड़ से पत्थर टूटकर गिरने लगते हैं।"

"बारिश के दिन पकौड़ी बनती है घर में।"

"पहाड़ की सड़कों पर कई दुर्घटनाएँ होती हैं बरसात में।"

प्रोत्साहन और आत्मविश्वास बनाए रखने के लिए इस गतिविधि में विद्यार्थियों को जाँचने व लिखने में कमी निकालने की कोशिश नहीं की।

ऐसी ही एक अन्य गतिविधि छोटी कक्षाओं के विद्यार्थियों के साथ की। विद्यार्थी को अपने मन से एक-एक वाक्य बोलने के लिए कहा। उन्होंने सोचकर जो वाक्य बोले, उन्हें बोर्ड पर लिखता गया। इस तरह बोर्ड पर दस-बारह विविधता भरे वाक्य लिखे गए। उन्होंने ज़्यादातर वाक्य अपने सन्दर्भ और समस्याओं से जुड़े हुए बोले–

"मुझे स्कूल के लिए बहुत दूर पैदल जाना पड़ता है।"

"मेरे घर में आज बिल्ली दूध पी गई।"

"सर्दियों में मेरी स्कूल ड्रेस देर से सूखती है, स्कूल जाने में देर हो जाती है।"

"मैडम, आपने बुरांश का फूल देखा है? मुझे बहुत सुन्दर लगता है।"

"कल मेरी दोस्त साइकिल चलाते गिर गई। उसके हाथ छिल गए।"

इस गतिविधि से कई उद्देश्य पूरे हो जाते हैं। इससे विद्यार्थी सोच-विचारकर वाक्य बनाते हैं, उन्हें बोलते हैं, और अलग-अलग तरह की वाक्य संरचनाओं व अर्थ को पढ़-सुनकर समझते हैं। वे नए शब्दों के साथ नए वाक्यों का गठन करते हैं।

'सात पूँछ का चूहा' की मौखिक याद दिलाने पर सुनयना और अवधेश ने बताया कि उन्होंने यह कहानी प्राइमरी में पढ़ी थी। उन्हें कक्षा याद नहीं थी। सुप्रिया ने कहानी का उद्देश्य भी बता दिया, "हमें किसी की बातों में नहीं आना चाहिए। सुनो सबकी, पर करो अपने मन की।" उसने कहा कि कहानी को कई बार सुनना अच्छा लगता है। यहाँ से लगा कि कहानियों से सुनना, बोलना, पढ़ना और पढ़कर समझ में योग्यता विस्तार करने पर कुछ किया जाना चाहिए।

कहानी 'सात पूँछ का चूहा' को टाइप किया। फ़ोटोस्टेट प्रतियाँ छठी कक्षा में बाँटीं। प्रत्येक दूसरी लाइन के बीच लिखने के लिए जगह छोड़ी। सब पढ़ने में जुट गए। नरेश और रंजन को पढ़ने के बाद याद आया कि यह कहानी हिन्दी की किताब में थी। यह बताने पर, कि यह पहली कक्षा में पढ़ी जाती रही है, सब हैरान थे। सभी पाँच साल बाद इस कहानी को दुबारा पढ़ रहे थे।

इस कहानी को पढ़ने के बाद अगले दिन विद्यार्थियों से कहा कि यदि इस कहानी के बारे में कुछ ख़ास या नया कह सको तो बात बने।

सोनम ने बताया, "यह कहानी तीन सौ शब्द से पहले ख़त्म हो जाती है।" मुकेश ने कहा, "सात से घटते-घटते पूँछ ज़ीरो हो जाती है।" राधिका का कहना था, "यह गिनती सिखाने के लिए आसान है।" नीमा ने सुझाया, "नुक़्स निकालने वालों की बातों में नहीं आना चाहिए।" मिष्टी ने पूछा, "चूहे को कैसे पता था कि नाई के पास कैंची होती है?" नमिता ने कहा, "कहानी समझाती है कि कोई चिढ़ाता है तो हमें चिढ़ना नहीं चाहिए।" कशिश ने यही बात दूसरे तरीक़े से कही, "कोई चिढ़ता है तो लोग-बाग उसे और चिढ़ाते हैं।" रंजन ने पूछा, "साँप को खुजली होती होगी तो वह कैसे खुजाता होगा?" नमन ने जानना चाहा, "पूँछ और मूँछ जैसे शब्द और भी तो होंगे!"

विद्यार्थियों की मज़ेदार नई-नई बातों और सवाली लहज़े ने बातचीत को नया मोड़ दिया। उनसे कहा गया कि 'सात पूँछ का चूहा' पढ़कर क्या-क्या सवाल बन सकते हैं, तब कक्षा में चुप रहने वाले विद्यार्थियों के सवाल भी झट से आए। जैसे–

"पूँछ न होने पर जानवरों को क्या-क्या परेशानी होती होगी?"

"इन्सानों की पूँछ होती तो क्या होता?"

"कैंची की ज़रूरत क्यों पड़ी होगी?"

"इन्सान बाल कटाते हैं, कोई और जानवर क्यों नहीं?"

"यदि नाई चूहे की पूँछ न काटता तो क्या होता?"

"चूहे कुतरते क्यों हैं?"

कक्षा की किताब से इतर की कहानियों में विद्यार्थी सहज रहते हैं। उन्हें लगता है कि यह परीक्षा जैसी वस्तु से बाहर है। यदि भाषाई कौशलों के विकास के लिए लगातार साहित्य का उपयोग किया जाए तो सुनना, बोलना, पढ़ना, और साथ में लिखना भी साधा जा सकता है। बशर्ते विद्यार्थियों को लिखने के लिए बाध्य न किया जाए। विद्यार्थियों में बदलाव देखने के लिए सिर्फ़ पाठ्यपुस्तक पर ही क्यों निर्भर रहा जाए!

मनोहर चमोली 'मनु', राजकीय इंटर कॉलेज कालेश्वर, पौड़ी गढ़वाल, उत्तराखण्ड

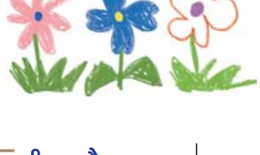

प्राथमिक कक्षाओं में लिखना सिखाने के कुछ अनुभव

दीक्षा सूर्यवंशी

हमेशा की तरह मैं विद्यार्थियों से संवाद करने के लिए कक्षा में गई। बातचीत शुरू की। कोई खेल के बारे में बता रहा था, कोई माँ द्वारा बनाए गए स्वादिष्ट भोजन के बारे में, और कोई अपने भविष्य के सपनों को साझा कर रहा था। उनकी बातों में जीवन्तता थी। लेकिन जब यही बातें कॉपी में लिखने को कहती, ज़्यादातर विद्यार्थियों की कॉपियाँ ख़ाली ही रह जातीं।

विद्यार्थियों की भाषाई क्षमताओं का बारीक़ी से अवलोकन करने पर पाया कि वे बोलकर बात रखने में तो माहिर हैं, लेकिन वही विचार और अनुभव लेखन में नहीं उतार पा रहे हैं। कई विद्यार्थी पढ़ सकते थे, लेकिन लिखने को कहा जाता तो वे हिचकिचाते थे। न उन्हें उचित वाक्य लिखने आते थे, न ही लिखकर अपने अनुभवों को व्यवस्थित ढंग से व्यक्त कर पाते थे। कहीं-न-कहीं लेखन के प्रति डर, अनिच्छा, आत्मविश्वास की कमी दिख रही थी। मैंने तय किया कि विद्यार्थियों के इस भय को दूर करना है। ऐसा वातावरण और प्रक्रियाएँ तैयार करनी हैं जिनसे वे अपने विचारों को स्वतंत्र व रचनात्मक रूप से लिख सकें।

पहले विद्यार्थियों की वर्तमान लेखन क्षमताओं का आकलन किया। सामने आया कि कुछ विद्यार्थी केवल शब्द पहचानते हैं, कुछ दो-तीन वाक्य लिख सकते हैं, और कुछ ही विद्यार्थी छोटे अनुच्छेद लिख पाते हैं। ज़्यादातर विद्यार्थी सोचकर मौलिक लेखन करने में जूझते हैं। यह समझकर कक्षा और विद्यार्थियों की आवश्यकतानुसार योजना बनाई। नहीं चाहती थी कि विद्यार्थी किसी लिखी हुई इबारत का अर्थ समझे बग़ैर उसकी नक़ल करके लिखें, यह क़वायद व्यर्थ थी। इससे लिखने की सोच बाधित होती है। वे जब सोच-समझकर लिखते हैं वही स्वाभाविक और रचनात्मक लेखन होता है।

कक्षा पहली और दूसरी के विद्यार्थियों को शुरुआत में अलग-अलग तरीक़ों से ड्राइंग और रंगीन चित्र बनाने के नियमित अवसर दिए, काफ़ी कुछ कहने वाले चित्रों पर ढेर सारी बातचीत की, शब्द पहचान व उनके अर्थ समझने पर कार्य किया, कहानी-कविताओं के ज़रिए बोलने तथा सुनने की गतिविधियाँ कीं, और विचार व्यक्त करने के लिए प्रोत्साहित किया। तीसरी से पाँचवीं के विद्यार्थियों के लिए उनके दक्षता स्तर के अनुसार गतिविधियों का चयन किया। कहानियाँ-कविताएँ पढ़ना, चित्रों से कहानी बनवाना, किसी घटना, प्रसंग या चित्रों पर विचार रखना जैसी गतिविधियों को शामिल किया। दीवारों पर पुस्तक की व स्थानीय कहानियों-कविताओं, और विद्यार्थियों की रचनाओं को सलीक़े से प्रस्तुत किया। इससे भाषामय वातावरण बन सका। विद्यार्थियों के साथ तरह-तरह के विषयों पर चर्चा की ताकि वे उनके बारे में सोच सकें, मौखिक विचार रख सकें, और उनमें लिखकर अपनी बातें कहने की इच्छा बने।

मौखिक अभिव्यक्ति में जब विद्यार्थी अपने विचार आत्मविश्वास से रखने लगे, उन्हें छोटे-छोटे लेखन कार्य दिए गए। पूछा गया कि वे किस विषय या चीज़ के बारे में लिखना चाहते हैं। विद्यार्थियों ने 'घर में गाय की बछिया बियानी', 'चीज़ें जिनसे मुझे डर लगता है', 'जब साइकिल से गिरने पर चोट लगी', 'खेलते समय झगड़ा हुआ', 'बारिश में नहाया', 'मम्मी ने चुटिया गूँथी', 'मैंने नई फ़्रॉक पहनी', 'मुहल्ले में कुतिया ने पिल्ले जने', 'बाज़ार व मेला' जैसे विषयों के बारे में बताया, और लिखने का प्रयास किया। हर हफ़्ते इसी तरह लिखने की गतिविधियाँ कराईं। जो विद्यार्थी कुछ-कुछ लिखने लगे थे, उन्होंने लिखने में उत्साह दिखाया। जो सीखने की प्रक्रिया में थे, उनसे चित्रों और सन्दर्भ से जुड़े विषयों पर मौखिक चर्चा जारी रखी। इससे वे भी धीरे-धीरे लेखन की ओर बढ़ने लगे।

वर्तनी और मात्राओं की त्रुटियों पर ज़्यादा ध्यान नहीं दिया। सामान्य ग़लतियों का पैटर्न समझकर उसके अनुसार ऐसी सुधारात्मक गतिविधियाँ कराईं जिनसे विद्यार्थी लिखने के लिए हतोत्साहित न हों। मसलन, विद्यार्थियों की इबारत की जगह किसी और की इबारत में ग़लतियाँ ढूँढ़ना, आदि।

हर महीने विद्यार्थियों के लेखन की प्रगति की समीक्षा की ताकि समझ सकूँ कि किस विद्यार्थी को किस तरह से सहयोग की आवश्यकता है। उनके लेखन नमूनों को उनके नाम की फ़ाइल, यानी पोर्टफ़ोलियो बनाकर सँजोया। इससे प्रगति को समझना आसान हुआ। वे जब पोर्टफ़ोलियो में अपनी लिखी रचनाएँ देखते-पढ़ते-बतियाते तब बहुत ख़ुश होते।

यहाँ मैं खिलेन्द्र के लिखने में हुई प्रगति को साझा करना चाहती हूँ। वह कक्षा 3 में पढ़ता है। शुरुआत में उसके लिए सोचकर वाक्य बनाना मुश्किल था, उसे मात्राओं व वर्तनी में भी समस्या थी। उसकी शब्दावली सीमित थी, और वह प्राय: दो-तीन पंक्तियाँ ही लिख पाता था। एक बार जब मैंने 'यातायात के संकेत' विषय पर विद्यार्थियों से लिखने को कहा, तब उसने लिखा, *"लाल लाइट पर रुकना चाहिए, हरी लाइट पर चलना चाहिए।"* इसके अलावा वह और कुछ नहीं लिख सका। हालाँकि बाद में इसका एक कारण भी समझ आया कि विषय उसके अनुभव से बहुत ज़्यादा जुड़ा नहीं था।

कुछ महीनों बाद, विद्यालय में ओझल नाम की बालिका का जन्मदिन मनाया गया। उसके माता-पिता ने सबको खाने पर बुलाया। उनके लिए स्वादिष्ट व्यंजन बनाए गए थे। इस अनुभव को ध्यान में रखते हुए विद्यार्थियों को 'ओझल के जन्मदिन पर हमने क्या किया' विषय पर लिखने के लिए प्रेरित किया। खिलेन्द्र के लिखे ने मुझे प्रभावित किया। उसमें न केवल उसकी सोच, कल्पना व भावनाएँ थीं, बल्कि मात्रा ज्ञान, शब्द भण्डार और वाक्य रचना की समझ भी दिखाई दी। उसने लिखा–

"आज हम ओझल का बर्थडे मनाए। आज हम ख़ूब खाए और समोसा भी खाए और ख़ूब मस्ती किए। उसके बाद थाली को सजा, फिर पढ़ने बैठे। खाना खाए बैठे। और ख़ूब सारा खीर भी खाए और पूरी भी खाए। हमने गिफ़्ट भी दिया। उसके बाद बर्थडे पूरा हो गया। बाद में हमें रिटर्न गिफ़्ट भी दिया गया। खाने में मैंने समोसा, जलेबी, खीर, पूड़ी खाया, और रिटर्न गिफ़्ट में हमें पेन और चॉकलेट भी दिया गया।"

जब खिलेन्द्र लिख रहा था, उसने पेंसिल, समोसा, केक जैसी कुछ वस्तुओं के नाम को शब्दों के स्थान पर चित्रों में दर्शाया।

इस उदाहरण से स्पष्ट हुआ कि मौखिक भाषा और विद्यार्थियों के भाषाई अनुभवों को विस्तार देने व उनमें लिखने की उत्सुकता पैदा करने से उनके मौलिक लेखन में निखार आ सकता है। साथ ही, शुरुआत में लेखन के लिए अनुभव-आधारित विषयों का चुनाव करना, और विद्यार्थियों को प्रेरित करने वाला वातावरण मिलना ज़रूरी है। यह बदलाव सिर्फ़ शब्दों, वाक्यों व विचार का नहीं, बल्कि लिखकर किसी को अपने अनुभव बताने के लिए बने आत्मविश्वास का भी था।

देखा गया कि कक्षा के ज़्यादातर विद्यार्थियों के लेखन में सुधार हुआ है। कुछ ने धीरे-धीरे अनुच्छेद लिखना शुरू किया, वहीं कुछ अपनी कल्पनाओं को कहानियों में बदलने लगे। लेकिन यह सारे प्रयास काफ़ी चुनौती भरे व जूझने वाले थे।

एक चुनौती भी थी। जब कुछ विद्यार्थी लेखन कार्य अधूरा छोड़ देते, अगले दिन उसी कार्य को आगे बढ़ाना उनके लिए कठिन हो जाता था। वे पिछला सन्दर्भ भूल जाते, या दुबारा उसी विषय में रुचि नहीं ले पाते थे। किसी को वाक्य बनाने में कठिनाई होती तो किसी का शब्द भण्डार सीमित था। सहयोग के लिए कक्षा में प्रिंट-रिच वातावरण तैयार किया। विद्यार्थियों को पुस्तकालय में पढ़ने और लिखने की नियमित गतिविधियों से जोड़ा ताकि उनकी मौखिक भाषा सम्पन्न बने, और उनमें लिखकर अपने विचार साझा करने में दिलचस्पी जागे।

लिखने से विश्वास बनता है कि जो सोचा और बोला जाता है, वह लिखा भी जा सकता है। जब विद्यार्थियों को बोलने के अवसर दिए, अनुभवों को धैर्य से सुना, प्रोत्साहित किया तब मौलिक लेखन उनके लिए बोझ नहीं, बल्कि आनन्द का स्रोत बन गया। अब मैं लिखने को एक कौशल के साथ ही किसी पाठक विशेष को अपने विचार बताने की जिज्ञासा व बातचीत का अहम साधन मानती हूँ। जब कोई बच्चा अपनी कल्पना, अनुभव और भावनाओं को काग़ज़ पर उतारता है, वह पढ़ने वालों के लिए अपने भीतर की दुनिया को सामने लाता है, और लिखना तभी सार्थक होता है।

दीक्षा सूर्यवंशी, प्रधान पाठक, शासकीय प्राथमिक शाला, रामनगर, सरगुजा, छत्तीसगढ़

अमूर्त अवधारणाओं को सिखाने के लिए मूर्त टीएलएम का उपयोग

राजेन्द्र कुमार कुमावत

मैं राजसमन्द ज़िले की देवगढ़ तहसील के ग्राम डाला का खेड़ा में अध्यापक नियुक्त हुआ। पहले दिन उत्साह से कक्षा 6 के 28 विद्यार्थियों को पढ़ाना शुरू किया। इकाई, दहाई और सैकड़ा की संख्याओं की समझ विकसित करने पर काम शुरू किया। मैंने असल में विद्यार्थियों का स्तर जाँचे बिना पढ़ा तो दिया, लेकिन फ़ीडबैक से पता चला कि कुछ को छोड़कर ज़्यादातर को बातें समझ ही नहीं आई थीं। शिक्षण के दौरान महसूस किया कि विद्यार्थी गिनती व संक्रियाएँ (जोड़, घटाव, गुणा, भाग, आदि) कर रहे हैं, लेकिन इन पर अभी भी अधिकांश की पकड़ अच्छी नहीं है। इस कारण उन्हें जोड़, घटाव के सवाल हल करने में परेशानी हो रही थी। उन्होंने जोड़-घटाव कुछ इस तरह से किए–

76 + 67	29 + 38	7 − 3	135 − 78
1313	517	4	63

चित्र 1 : मैंने करके देखा, समझ गया

विद्यार्थी घटाने में बिना हासिल के सवाल तो आसानी से कर लेते थे, लेकिन हासिल के सवाल में परेशानी आती है। कुछ विद्यार्थी जोड़ में दहाई से जोड़ना प्रारम्भ कर रहे थे, और कुछ इकाइयों तथा दहाइयों को अलग-अलग जोड़ रहे थे।

पहले संक्रियाओं से सम्बन्धित कार्य पर ज़ोर दिया। फिर लगा जल्दबाज़ी कर रहा हूँ, क्योंकि जब तक विद्यार्थी संख्या निर्माण की अवधारणाओं को अच्छी तरह समझ नहीं पाएँगे, संक्रियाओं तक पहुँचना बेमतलब होगा। इसलिए सोचा कि इकाई, दहाई और सैकड़ा पर काम किया जाना चाहिए। यह भी विचार किया कि अभी जिस तरीक़े से पढ़ा रहा हूँ, विद्यार्थी समझ नहीं पा रहे हैं।

टीएलएम से सीखना

मुझे अमूर्त अवधारणाओं की समझ बनाने के लिए विभिन्न प्रकार की ठोस या मूर्त शिक्षण अधिगम सामग्री (टीएलएम) का प्रयोग करना चाहिए। ऐसी सामग्री जो आसानी से मिल जाए, और इतनी संख्या में हो जिसका उपयोग कक्षा के ज़्यादा-से-ज़्यादा विद्यार्थी ख़ुद कर सकें, और घर में भी सीखने के लिए इस्तेमाल कर सकें। मेरा अनुभव है कि यदि शिक्षक के सकारात्मक सहयोग से विद्यार्थी ख़ुद गणित करके सीखते हैं, सीखना ज़्यादा बेहतर होता है। इसलिए माचिस की तीलियों, सूखी डण्डियों, फूलों, ढक्कन और कंकड़ों की सहायता से इकाई, दहाई व सैकड़ा की अवधारणा पर कार्य किया। डीन्स (Dienes) ब्लॉक जैसी कुछ अधिगम सामग्री एकलव्य भोपाल से ख़रीदी ताकि विद्यार्थी अमूर्त से मूर्त की ओर यात्रा कर सकें।

सबसे पहले तीलियों व इसके बण्डल (ढेरी) बनवाकर काम किया। यह इसलिए ज़रूरी था कि विद्यार्थी 1 से 50 या 100 और इससे भी ज़्यादा तक वस्तुएँ गिन तो लेते हैं, लेकिन जहाँ मूर्त से अमूर्त की बात कहें, या जब संख्याओं को प्रतीकात्मक रूप से लिखने की बात आती है वहाँ तीलियों व बण्डल का तरीक़ा कारगर होता है। जब 1000 तक की वस्तुओं को गिनकर लिखने की बात आती है वहाँ जगह और समय की खपत ज़्यादा होती है। इसलिए तीलियों व बण्डल को चित्ररूप में (चित्र बनाकर) लिखना-समझना ज़रूरी लगता है।

सभी विद्यार्थियों को 40 से 50 तीलियाँ / सूखी डण्डियाँ दीं, और उन्हें हाथ से उठाकर एक-एक तीली अलग रखते हुए बोलकर गिनने को कहा। सभी ने एक-एक तीली उठाकर गिनते हुए अलग रखी और कहा, "1"। फिर सबने 1 और तीली उठाकर रखी और कहा "2"। इसी तरह सबने 9 तक गिनते हुए 9 तीलियाँ मिलाईं। उन्हें बताया कि ढेरी की ये 9 तीलियाँ जोड़ में 9 हैं, और सब एक-एक अलग हैं, इन्हें इकाई / इकाइयाँ कहेंगे। फिर सबने गिनना आगे बढ़ाते हुए 9 तीलियों में 1 तीली मिलाते हुए कहा, "10 तीलियाँ"। इसके बाद उन्होंने इन 10 तीलियों का बण्डल बनाया, और इस बण्डल को (जिसमें 10 तीलियाँ हैं) 'दहाई का बण्डल' कहा। एक विद्यार्थी ने बताया कि दहाई के एक बण्डल में 10 इकाई (अलग-अलग) तीलियाँ हैं।

अगले दिन विद्यार्थियों से कहा कि वे अपने घर या आस-पास से कोई ऐसी वस्तु लाएँ जिसमें 1 दहाई वस्तुएँ हों। दूसरे दिन एक विद्यार्थी 10 बिन्दियों का एक पत्ता लाया और बोला, "ये हैं एक दहाई बिन्दियाँ!" एक अन्य विद्यार्थी दहाई वस्तुओं के

लिए न सिर्फ़ दवाई की 10 गोलियों का एक पत्ता लाया, बल्कि सबको दिखाकर सवाल भी पूछा, "मेरे पिता प्रतिदिन एक गोली खाते हैं। बताओ एक महीने में उन्हें गोलियों के कितने पत्ते लगेंगे?" सीखने में विद्यार्थियों की ऐसी भागीदारी से मेरा यह विचार मज़बूत हुआ कि जब गणित को विद्यार्थियों के सन्दर्भ से जोड़ने के मौक़े बनाए जाते हैं, उनकी मानसिक सोच ज़्यादा सक्रिय होती है।

इससे विद्यार्थी यह भी समझ पाए कि 1 से 9 तक गिनना आसान है, लेकिन जैसे-जैसे संख्या आगे बढ़नी शुरू होती है गिनने में मुश्किल होने लगती है। इसलिए इकाई के बाद 10 इकाइयों से दहाई की समझ बनाने और 10 दहाइयों से सैकड़ा बनाने की समझ से वस्तुओं को बहुत बड़ी संख्या में गिनना और संक्रियाएँ करना सुगम हो जाता है। दहाई के लिए 1 से 9 तक अलग-अलग हैं, लेकिन ज्यों ही 1 वस्तु और बढ़ जाती है, 10 का एक समूह बन जाता है। संख्या 48 इस तरह दर्शाएँगे—

दहाई	इकाई
4 बण्डल	8 तीलियाँ

वह स्थान दहाई का कहलाएगा जिसमें 10 वस्तुओं का एक समूह या बण्डल है, तथा शेष स्थान इकाई का कहलाएगा। उदाहरण के लिए, 48 में 10 के चार बण्डल हैं और 8 तीलियाँ खुली हैं।

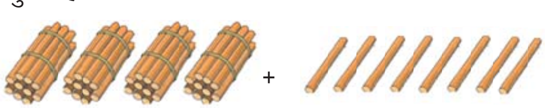 = 48

4 × 10 + 8 = 48

दहाई स्थान पर बण्डल संख्या × एक बण्डल में तीलियाँ + इकाई स्थान पर तीलियाँ = कुल तीलियाँ

जब विद्यार्थियों में इकाई-दहाई की अवधारणा विकसित होने लगी, सैकड़े की अवधारणा पर काम करना शुरू किया गया। इस गतिविधि को आगे बढ़ाते हुए जब विद्यार्थियों ने 10-10 तीलियों अर्थात् दहाई के 10 बण्डल बना लिए, उन्हें इनको मिलकर सैकड़े का बड़ा बण्डल बनाने को कहा। इसके बाद विद्यार्थियों से इकाई, दहाई और सैकड़ा के बीच सम्बन्धों पर विस्तार से चर्चा की।

मैंने विद्यार्थियों के मध्य 148 की संख्याएँ रखीं। 148 में विद्यार्थी 48 तक उस संख्या की सटीक व्याख्या करके बताने लगे कि 4 असल में 40 है। माने, 10 के 4 बण्डल हैं और 8 इकाई के स्थान पर वस्तुएँ हैं। अब बात 1 पर आकर रुक गई। तभी एक विद्यार्थी ने सोचकर पूछा, "क्या यह एक सैकड़ा, यानी 100 है।" दूसरे ने सोचा कि 1, 100 कैसे हो सकता है। तब एक और विद्यार्थी ने कहा, "हाँ, दस-दस के दस बण्डल मिलाकर 100 (सैकड़ा) का एक बण्डल।

सैकड़ा	दहाई	इकाई
1 बण्डल 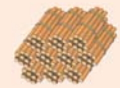	4 बण्डल	8 तीलियाँ

जब दहाई से 10 के बण्डल बनते जाते हैं तो 10 बण्डल का समूह (संख्या 100) सैकड़े के स्थान पर शिफ़्ट कर दिया जाता है। अर्थात् 100 का एक बण्डल बनाकर आगे शिफ़्ट कर सैकड़े के स्थान पर लिख दिया जाता है। 1 बण्डल = 100, 2 बण्डल = 200, आदि को सैकड़े का बण्डल कहा जाता है।

इकाई, दहाई, सैकड़ा की अवधारणा की समझ को पक्का करने के लिए कुछ और संख्याओं पर कार्य किया। 242 को विद्यार्थियों ने तीलियों से समझाया, फिर चित्ररूप में कॉपी और बोर्ड पर इस तरह लिखा—

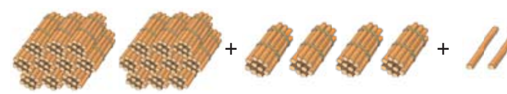 = 242

2 × 100 + 4 × 10 + 2 = 200 + 40 + 2 = 242

तीलियों की जगह अन्य वस्तुओं से भी इकाई, दहाई और सैकड़ा की समझ बनाई जा सकती है।

सैकड़े की बण्डल संख्या × एक बण्डल में वस्तुएँ + दहाई के बण्डल की संख्या × एक बण्डल में वस्तुएँ + इकाई वस्तुएँ = कुल वस्तुएँ

विद्यार्थी इन अवधारणाओं को समझ चुके थे, क्योंकि अब वे 264 में 2 सैकड़ा यानी 200, 6 को दहाई अर्थात् 60 व 4 को इकाई पढ़ने-समझने लग गए। यह समझ बनने से जोड़ व घटाव की अवधारणाएँ और आसान होने लगीं। कौशल अब उनमें स्थाई होने लगे। विद्यार्थी सैकड़े व इससे आगे हज़ार तक की संख्याओं को पढ़ना-समझना और संक्रियाएँ करना सीख रहे थे।

अनुभव रहा कि विद्यार्थियों को सहायक सामग्री से अध्ययन करवाने से कठिन विषयवस्तु को सरल और रुचिकर बनाया जा सकता है। इससे अध्ययन ज़्यादा स्थाई रहता है। उन्हें अवधारणाएँ अच्छी तरह से स्पष्ट हो जाती हैं, और गणित के प्रति जो भय बैठा है वह भी दूर हो जाता है।

राजेन्द्र कुमार, अध्यापक, राजकीय बालिका उच्च माध्यमिक विद्यालय आमेट, राजसमन्द, राजस्थान